पंजीयन संख्या : 68939/98

ज्ञान तत्व

सत्यता एवं निष्पक्षता का निर्भीक पाक्षिक

APR 2026

अंक - 03

नक्सलवाद के प्रारंभ और पतन की कहानी

3

लेखक:- ज्ञानेन्द्र आर्य (मोबाइल- 8318621282)

491

नक्सलवाद व्यवस्था परिवर्तन या सत्ता संघर्ष- बजरंग लाल अग्रवाल।

5

प्रकाशन की तिथि - 30-04-2026 पोस्ट की तिथि - 15-05-2026

सिंहावलोकन

07 **भारत में नक्सलवाद**

08 **जून 2008 में नक्सलवाद पर प्रश्नोत्तर**

10 **नक्सलवाद और समाधान**

14 **2013 घटनाएँ**

15 **प्रश्नोत्तर जून** 2010

16 **नक्सलवाद समर्थक गांधीवादी नहीं**

17 **नक्सलवाद और शांतिवार्ता**

18 **भारत में नक्सलवाद**

पत्र व्यवहार का पता

बजरंग लाल अग्रवाल पोस्ट बाक्स 15, रायपुर (छ.ग.) 492021

website : margdarshak.info

प्रकाशक, संपादक व स्वामी - बजरंगलाल

9617079344

mail : Support@margdarshak.info

मुख्य कार्यालय-
ज्ञानयज्ञ परिवार आश्रम
रामानुजगंज छत्तीसगढ़ 497220
8318621282, 9630766001

लोक स्वराज अभियान
303 कृष्णा शिप्रा अजूरा अपार्टमेंट कौशांबी
गाजियाबाद 201012
9325683604, 9012432074

प्रधान संपादक
बजरंग लाल अग्रवाल
(बजरंग मुनि)

संपादक मण्डल
नरेन्द्र सिंह
संजय तिवारी
विपुल आदर्श

सहयोगी संपादक
ज्ञानेन्द्र आर्य

सदस्यता नियमन
संजय गुप्ता 872669477
कुशल दुबे 7999934238

सज्जा
लाल बाबू रवि

वितरण एवं मुद्रण सहयोग
रबीन्द्र विश्वास

ज्ञान केन्द्र विचार, समन्वय और परिवर्तन के तीर्थ

नक्सलवाद के प्रारंभ और पतन की कहानी

बजरंग मुनि
प्रधान संपादक

लेखकः- ज्ञानेन्द्र आर्य (मोबाइल- 8318621282)

नक्सलवाद के प्रारंभ और प्रगति की जानकारी आप सबको अनेक माध्यमों से मिलती रही है। नक्सलवाद का प्रारंभ भौतिक प्रगति के अंतर से हुआ था और आगे बढ़ते-बढ़ते यह सत्ता संघर्ष तक जा पहुँचा। यह बात सब जानते हैं कि नक्सलवाद अब लगभग समाप्ति की ओर है। लेकिन मैं आपको आज की चर्चा के माध्यम से यह बताने जा रहा हूँ कि नक्सलवाद के पतन की शुरुआत की पटकथा कहाँ और कब से लिखी गई। मेरी जानकारी के अनुसार, नक्सलवाद के सर्वोच्च शिखर और उसके पतन की पृष्ठभूमि के लिए हमें 1995 से 2010 बीच के कालखंड में खोज करनी होगी। नक्सलवाद भारत में दो दिशाओं से बढ़ रहा था —एक धारा बिहार-नेपाल बॉर्डर से शुरू होकर बिहार के अंतिम छोर तक अपनी पकड़ बना लेती है। इस उत्तरी धारा का संचालन MCC नामक संगठन करता था। दूसरी धारा तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश से होते हुए छत्तीसगढ़ बॉर्डर तक आ गई, जिसे पीडब्ल्यूजी (PWG - पीपुल्स वार ग्रुप) संचालित करता था। उत्तर और दक्षिण से चलने वाली दोनों धाराएँ बहुत तेजी से छत्तीसगढ़ के उत्तरी और दक्षिणी सिरे तक पहुँच गईं। उसी कालखंड में छत्तीसगढ़ में गांधीवादियों के बीच व्यवस्था परिवर्तन को लेकर अलग सोच चल रही थी। दक्षिण से आने वाली धारा ने मध्य प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह को सत्ता के लालच में अपने प्रभाव में ले लिया। दूसरी ओर गांधीवादी समाज सुधारक ब्रह्मदेव शर्मा, जो उच्च प्रशासनिक अधिकारी भी थे, बस्तर क्षेत्र में व्यवस्था परिवर्तन के लिए सक्रिय थे। दिग्विजय सिंह एक चालाक और मजबूत नेता थे। उन्होंने ब्रह्मदेव शर्मा जैसे भले व्यक्ति को अपने साथ जोड़ लिया। परिणामस्वरूप बस्तर में नक्सलवाद बहुत तेजी से प्रवेश कर गया। ब्रह्मदेव शर्मा ने बस्तर क्षेत्र के बड़े भूभाग में बाहरी लोगों के प्रवेश पर प्रतिबंध लगा दिया, जिससे विकास रुक गया और नक्सलवाद को वहाँ पैर जमाने का अवसर मिला। इस कालखंड में नक्सलवादियों ने बस्तर के एक हिस्से में अपनी “जनताना सरकार” भी बना ली। ठीक इसी समय छत्तीसगढ़ के उत्तरी भूभाग में एक अलग प्रयोग चल रहा था। बलरामपुर-रामानुजगंज जिले के प्रसिद्ध गांधीवादी बजरंगलाल अग्रवाल तथा ठाकुरदास बंग के नेतृत्व में गाँव-गाँव में “लोकस्वराज” की अलख जगाई जा रही थी। इस गांधीवादी समूह ने “हमें सुराज्य नहीं, स्वराज्य चाहिए” का नारा दिया। यह समूह लगातार यह आवाज उठा रहा था कि लोकतंत्र की तुलना में लोकस्वराज्य अधिक अच्छा है। यह समूह व्यवस्था परिवर्तन के बाद बनने वाली नई राजनैतिक व्यवस्था के लिए एक नए संविधान का प्रारूप तैयार कर रहा था, जिसमें देशभर के गांधीवादी और अन्य लोग शामिल थे। इस योजना में झारखंड के कुछ नक्सलवादी भी चर्चा में भाग लेते थे। जब दिग्विजय सिंह और ब्रह्मदेव शर्मा को इस बात की जानकारी मिली, तो दोनों ने मिलकर दिसंबर 1995 में रामानुजगंज पर प्रशासनिक आक्रमण किया। शहर के कई प्रमुख लोगों को विभिन्न धाराओं में जेल में डाल दिया गया, और बजरंगलाल अग्रवाल को नक्सलवादी घोषित कर 30 मार्च 1996 को गोली मारने की योजना बनी। लेकिन ठाकुरदास बंग और अमरनाथ भाई के नेतृत्व में स्थानीय लोगों ने सहयोग किया और उच्च न्यायालय से सबको राहत मिल गई। रामानुजगंज पर हुए इस आक्रमण से बिहार बॉर्डर के नक्सलियों की सहानुभूति भी बजरंगलाल अग्रवाल के पक्ष में गई, और इतने बड़े आक्रमण के बाद भी उनका अभियान सक्रिय रहा। दिग्विजय सिंह इस प्रयोग से बहुत बौखला गए, लेकिन कुछ नहीं कर सके क्योंकि उत्तर छत्तीसगढ़ का यह आंदोलन सामाजिक उद्देश्यों पर आधारित था और उसे देशभर के गांधीवादियों का समर्थन प्राप्त था। इसके विपरीत दक्षिण छत्तीसगढ़ में चलने वाला नक्सलवादी आंदोलन पूरी तरह राजनीतिक उद्देश्यों से प्रेरित था और उसे केवल कांग्रेस का ही समर्थन प्राप्त था। 4 नवंबर 1999 को रामानुजगंज में बनी नई राजनीतिक व्यवस्था का प्रारूप प्रकाशित किया गया। इसे बनाने में गांधीवादियों की प्रमुख भूमिका थी, जिसमें कुछ सहयोग झारखंड के नक्सलवादियों और संघ के लोगों का भी था। हालाँकि संघ और बजरंगलाल अग्रवाल के अधिकांश लोग “हमें सुराज्य नहीं, स्वराज्य चाहिए” के नारे से सहमत नहीं थे, फिर भी उन्होंने विरोध नहीं किया। तब तक उत्तरी छत्तीसगढ़ में नक्सलवाद का प्रवेश नहीं हुआ था। लेकिन इसी दौरान

झारखंड के नक्सलवादियों और रामानुजगंज समूह के बीच मतभेद उत्पन्न हो गए — कारण था कि रामानुजगंज समूह चाहता था कि नक्सलवादी प्रस्तावित संविधान का समर्थन करें और अहिंसक तरीके से भाग लें। झारखंड के नक्सलवादियों ने इन दोनों शर्तों को अस्वीकार कर दिया। इसी काल में कुछ नक्सलवादी प्रसिद्ध ठाकुर के नेतृत्व में छत्तीसगढ़ में प्रवेश करते हैं। लेकिन लोधा गाँव के लोगों ने उन्हें गिरफ्तार कराकर जेल भेज दिया। बाद में बिहार चुनाव के दौरान लालू प्रसाद यादव, नक्सलियों के दबाव में, प्रसिद्ध ठाकुर को जेल से छुड़वा देते हैं। जेल से छूटते ही प्रसिद्ध ठाकुर ने लोधा गाँव पर हमला किया, और उस गिरफ्तार करने वाले दो लोगों में से एक की खुलेआम हत्या कर दी। दूसरा व्यक्ति गाँव छोड़कर भाग गया और फिर कभी वापस नहीं आया। धीरे-धीरे अन्य नक्सलवादी भी छत्तीसगढ़ में प्रवेश करते गए और बलरामपुर जिले में अपनी समानांतर सरकार बना ली। यद्यपि दक्षिण बस्तर जैसी उनकी “राज्य व्यवस्था” नहीं थी, फिर भी दोनों जगह अपनी-अपनी गतिविधियाँ चल रही थीं। नक्सलवादियों ने “भय स्थापना कार्यक्रम” के तहत बलरामपुर जिले के पाँच विकास खण्डों के पाँच सम्मानित व्यक्तियों की खुलेआम हत्याएँ कीं, और सरकार कुछ नहीं कर सकी या करना नहीं चाहती थी। इसी दौरान मध्य प्रदेश का विभाजन हुआ और अजीत जोगी की सरकार छत्तीसगढ़ में बनी, जिससे रामानुजगंज के लोगों को कुछ राहत महसूस हुई। इस बीच दक्षिण भारत से चला पीडब्ल्यूजी ग्रुप सरकारी गुप्त समर्थन से बहुत तेजी से आगे बढ़ा और पूरे छत्तीसगढ़ पर अपना प्रभुत्व चाहता था ताकि भारत के बीच में एक कॉरिडोर बन सके जिससे देश विभाजित हो जाए और नक्सली नियंत्रण स्थापित कर सकें। इस योजना की सफलता के लिए पीडब्ल्यूजी के सामने सबसे बड़ी बाधा थी रामानुजगंज में बढ़ रहा एमसीसी ग्रुप और गांधीवादी लोकस्वराज आंदोलन। पीडब्ल्यूजी ने एमसीसी वालों को छत्तीसगढ़ छोड़ने का आदेश दिया, पर जब उन्होंने मना किया, तो पीडब्ल्यूजी ने छत्तीसगढ़ सीमा से कुछ मीटर पार झारखंड में घुसकर उनके बड़े नेताओं की हत्या कर दी। यह हत्याकांड तेजी से आगे नहीं बढ़ सका क्योंकि पीडब्ल्यूजी वालों को कहीं ऊपर से आदेश आया कि रुक जाएँ। और एक-दो महीने के अंदर ही पश्चिम बंगाल में एमसीसी और पीडब्ल्यूजी के प्रमुख लोगों के बीच समझौता कराया गया। दोनों के बीच टकराव के लिए सबसे बड़ा नाम था बजरंग लाल अग्रवाल का। पीडब्ल्यूजी उन्हें सबसे अधिक घातक समझकर उनकी हत्या करना चाहती थी। यहाँ तक कि एक दिन उनकी हत्या की योजना भी बनाई गई थी, और वाड्रफ़ नगर के एक अधिवक्ता केदार यादव ने अग्रवाल जी को सूचित भी किया था। लेकिन जानकारी के अनुसार, एमसीसी वालों ने पी डब्लू जी वालों को रोक दिया था। कोलकाता की मीटिंग के बाद दोनों के बीच आपसी समझौते के तहत बजरंग लाल अग्रवाल के विषय में अंतिम निर्णय करने के लिए एक कमेटी बनाई गई। उस समय बजरंग लाल अग्रवाल बलरामपुर जिले के सबसे बड़े शहर रामानुजगंज के नगर पंचायत के अध्यक्ष थे। कई महीनों तक जाँच करने के बाद कमेटी ने एमसीसी के पक्ष में निर्णय दिया, इस तरह यह मामला समाप्त किया गया। इसी कालखंड में एकाएक छत्तीसगढ़ की सरकार बदल जाती है। अजीत जोगी की सरकार के स्थान पर रमन सिंह की सरकार बन गई, और इस सरकार ने रामानुजगंज क्षेत्र के नक्सलवाद को सबसे बड़ी समस्या मान लिया। छत्तीसगढ़ का गृह मंत्रालय रामानुजगंज क्षेत्र के ही निवासी रामविचार नेताम को दिया गया, और रामविचार नेताम ने एक बहुत ही सुलझे हुए पुलिस अधीक्षक शिवराम सिंह कल्लूरी को यह जिम्मेदारी सौंपी। बजरंग लाल अग्रवाल और उनका गांधीवादी समूह नक्सलवादियों पर दबाव बना रहा था कि वे बंदूक और हिंसा छोड़कर लोकस्वराज के आधार पर अपनी सरकार चलाएँ — जैसा प्रयोग रामानुजगंज शहर में किया जा रहा था। इसके पूर्व 4 नवंबर 1999 को संविधान का अंतिम प्रारूप बन जाने के बाद देशभर से आए हुए विद्वानों ने बैठकर यह निर्णय किया था कि रामानुजगंज शहर में अपने नए संविधान के अनुसार शहर का प्रशासन चलाकर दुनिया के सामने लोकस्वराज का एक उदाहरण प्रस्तुत किया जाए। इस आधार पर बजरंग लाल अग्रवाल को चुनाव लड़ाकर नगर पंचायत अध्यक्ष बनाया गया। अन्य गांधीवादी तथा कुछ संघ के कार्यकर्ता भी लगातार उनका मार्गदर्शन करते रहे। उन्होंने यह घोषणा की कि रामानुजगंज नगर पंचायत का सारा प्रशासन प्रस्तावित संविधान के आधार पर चलेगा। अपराध नियंत्रण नगर प्रशासन की जिम्मेदारी होगी। प्रसिद्ध संविधान विशेषज्ञ सुभाष कश्यप, राम बहादुर राय आदि अनेक विद्वानो का इस रामानुजगंज के लोक स्वराज्य प्रयोग को प्रत्यक्ष मार्गदर्शन मिला । उन्होने समय समय पर रामानुजगंज आकर सलाह दी। साथ ही प्रत्येक शुक्रवार शाम 5:30 बजे नगर पालिका कार्यालय में आम जनता की बैठक होगी, और इस बैठक में जो निर्णय होगा वही निर्णय कानून माना जाएगा। रामानुजगंज शहर को अपराध नियंत्रित नगर घोषित कर दिया गया तथा पाँच वर्षों तक नगर की सारी प्रशासनिक व्यवस्था नए संविधान के अनुसार चलती रही। लेकिन नक्सलियों ने मानने से इनकार कर दिया। वे खुलेआम हथियार लेकर घूमते थे, आम जनता को डराते-धमकाते थे, और उनसे हर सरकारी कार्य में10% टैक्स के रूप में वसूली करते थे। गांधीवादियों और नक्सलवादियों के बीच कई बार वार्ता हुई, लेकिन नक्सलियों ने इस गांधीवादी मार्ग पर चलना स्वीकार नहीं किया। ऐसी स्थिति में गांधीवादियों ने भी नक्सलवादियों से अपने सारे संपर्क तोड़ दिए। ठीक इसी कालखंड में बीजेपी की सरकार बनी और एसपी कल्लूरी को पुलिस अधीक्षक

बनाकर नक्सलवाद पर नियंत्रण की जिम्मेदारी दी गई। इसी समय बजरंग लाल अग्रवाल के दूर के रिश्तेदार के बेटे को नक्सलियों ने मौत के घाट उतार दिया। इस हत्याकांड के बाद मामला और भी संवेदनशील हो गया। बजरंग लाल अग्रवाल और पुलिस अधीक्षक के बीच आपस में एक समझौता हुआ, जिसके अनुसार उत्तरी छत्तीसगढ़ के पाँच प्रमुख नक्सलियों को किसी भी तरीके से पकड़कर उनकी हत्या करने की सहमति बनी — चाहे वह मुठभेड़ फर्जी ही क्यों न हो। एसपी कल्लूरी ने यह दायित्व स्वीकार किया और बजरंग लाल अग्रवाल ने प्रशासनिक व कानूनी स्तर पर पुलिस को बचाने की जिम्मेदारी ली। इस समझौते के अंतर्गत पाँचों प्रमुख नक्सलियों को मार दिया गया। इन मामलों में जो विभिन्न आयोगों द्वारा जाँच की गई, उनमें प्रमुख गवाह के रूप में बजरंग लाल अग्रवाल की गवाही ली गई, और उन्होंने विभिन्न जाँच आयोगों के सामने वही बात बताई जो पुलिस ने बताई थी। बाद में एस पी कल्लुरी को बस्तर में भी भेजा गया लेकिन वहाँ वे सफल नहीं हो सके क्योंकि वहाँ के मीडिया ग्रुप और विश्वसनीय सामाजिक कार्यकर्ताओं का उन्हे अंध समर्थन नहीं मिला। इस तरह छत्तीसगढ़ के उत्तरी भाग से नकसलवाद का पूरी तरह सफाया हो गया । 2-3 वर्षों में तो उस छेत्र में नकसलवाद का कोई नाम लेवा भी नहीं बचा । मैं यह कह सकता हूँ की भारत से जनसहयोग के माध्यम से नकसलवाद के समापन की शुरुआत रामानुजगंज से हुई और उसके समापन में गाँधीवादियों की ही प्रमुख भूमिका रही । नक्सल वादी छत्तीसगढ़ के दक्षिण से उत्तर तक के कॉरिडॉर को जोड़ने में सफल नहीं हो सके और हार थक कर उन्होने अपने पैर पीछे खीच लिए। यहीं से नकसलवाद के समापन की शुरुआत होती है जो अब 20 वर्षो बाद पूरे भारत में अपने चरम पर पाहुची है। मैं बजरंग लाल अग्रवाल जो अब बजरंग मुनि है उनसे कई बार नकसलवाद पर चर्चा किया उन्होने इस संबंध में कई घटनाएँ भी बताई । बजरंग मुनि जी भारत के सबसे अधिक गंभीर विचारक माने जाते हैं । उन्होने दुनिया की प्रमुख समस्याओं पर गंभीरता से विचार किया है उसके कारण भी बताएं हैं और समाधान भी बताया हैं। मेरा अनुमान है की निकट भविष्य में वे दुनिया के प्रमुख विचारकों में भी माने जा सकते हैं ।

मैंने 20 वर्ष पहले ब्रह्मदेव शर्मा के साथ काम कर रहे तथा बाद में प्रमुख नक्सलवादियों के साथ काम करने वाले कई लोगों से भी प्रत्यक्ष चर्चा की। मैं उस गाँव भी गया जहां प्रसिद्ध ठाकुर पकड़े गए थे तथा लालू जी की कृपा से छूटने के बाद उसने पकड़ने वाले की हत्या की थी। आज भी उस गाँव के लोग प्रत्यक्ष दर्शी हैं। मैंने इस जिले के पांचों विकासखंडों में घूम घूम कर नकसलवाद के उत्थान और पतन की घटनाओ पर चर्चा की। पांचों विकासखंडों के एक एक प्रमुख व्यक्ति की नक्सलियों द्वारा की गयी हत्या के भी सारे प्रमाण मौजूद हैं उस समय इतना भय व्याप्त था की कोई न्यायालय में गवाही देने को तैयार नहीं हुआ और अपराधी निर्दोष बच गए। न्यायाधीश भी नक्सलियों से डरते थे। रामानुजगंज शहर से कुछ दूर पीपरौल गाँव में नक्सलियों ने हाजरों आदमी की जन अदालत लगाकर सबके बीच एक व्यक्ति की हत्या की थी । मैं रामानुजगंज से 2-3 किलोमीटर दूर झारखंड के उन गावों में भी घूमा जहां दक्षिण भारत के नक्सलवादी सगठन पी डब्लू जी और उत्तर भारत के नक्सलवादी संगठन एम सी सी के बीच हिंसक टकराव हुआ था और कई लोग मारे भी गए थे। इस प्रकार की घटनाएँ अब रामानुजगंज के लिए ही नहीं बल्कि सारे देश के लिए इतिहास बन चुकी है। बजरंग मुनि जी ने नकसलवाद के विषय में समय समय पर अनेक लेख लिखे। मैंने उन सब लेखों कों पढ़ा है। उन लेखों में से कुछ महत्वपूर्ण लेखों का संछिप्त विवरण मैं आपके सामने प्रस्तुत कर रहा हूँ। ये सभी लेख ज्ञान तत्व पाक्षिक पत्रिका से संकलित किए गए हैं । मैं आपको स्पष्ट कर दु की ज्ञान तत्व पाक्षिक 40 वर्षों से हर 15 दिन में रामानुजगंज से प्रकाशित होता रहा है और अब तक उसी तरह चल रहा है। सान 2000 के पहले की इस पाक्षिक की प्रतियाँ उपलब्ध नहीं है क्योंकि 1996 में जब मुनि जी को नक्सलवादी घोषित करके उनपर अत्याचार शुरू हुआ तब उनके परिवार के लोगों उनका सारा साहित्य जला दिया था लेकिन 2000 के बाद का अब तक का साहित्य सुरक्षित है। मुनि जी ने जून 2006 से 2010 के बीच में नकसलवाद पर जो लेख लिखे वे प्रस्तुत हैं । अन्य बाद के लेख छोड़ दिये गए हैं । सिर्फ 2017 का एक लेख शामिल किया गया है। आप यदि सभी लेख पढ़ना चाहेंगे तो आप संपर्क करिएगा।

नक्सलवाद व्यवस्था परिवर्तन या सत्ता संघर्ष- बजरंग लाल अग्रवाल ।

भारत में नक्सलवाद लगातार बढ़ रहा है। नेपाल के सत्ता परिवर्तन से उनका मनोबल भारत में भी मजबूत हुआ है। नेपाल से लेकर आंध्र को जोड़ने में अब छत्तीसगढ़ का कुछ क्षेत्र ही बचा हुआ है। अन्यथा अन्य सभी प्रदेषों को तो वे आसानी से पार कर चुके हैं। छत्तीसगढ़ में भी दोनों ओर से निरन्तर और निर्वाध रूप से उनकी प्रगति जारी है। सम्पूर्ण भारत में पहली बार छत्तीसगढ़ सरकार ने नक्सलवाद को बस्तर जिले में रोकने को चुनौती के रूप में लिया है। नक्सलवादियों ने भी अपनी सारी ताकत बस्तर क्षेत्र में लगा दी है। दोनो ओर से ही नियम कानून और मानवता को खूँटी पर टांगकर मुकाबला किया जा रहा है। अभी अभी अमेरिकी दूतावास ने भी बस्तर क्षेत्र में बढ़ते नक्सलवाद पर नियंत्रण के लिये छत्तीसगढ़ में भारत सरकार को सहायता की इच्छा व्यक्त की है। उसकी इस इच्छा का छत्तीसगढ़ सरकार ने स्वागत किया और भारत के साम्यवादियों ने विरोध। बस्तर जिले का नक्सलवाद

कितना महत्वपूर्ण हो गया है कि एक विदेशी शक्ति ''अमेरिका'' को उस आतंकवाद के विरूद्ध सहायता की पेषकष करनी पड़ी। दूसरी ओर दूसरे विदेशी गुट के भारतीय एजेन्टों को भी अमेरिका के विरूद्ध आवाज उठानी पड़ी। अमेरिका को कष्मीरी आतंकवाद की अपेक्षा बस्तर अधिक समस्या ग्रस्त दिखा और साम्यवादियों की तो चर्चा ही करना व्यर्थ है। वे तो रात में गंभीर निद्रा में भी अमेरिका के विरूद्ध बड़बड़ाते रहने के लिये ख्याति प्राप्त हैं चाहे संदर्भ रहे या न रहे। भारत की सम्पूर्ण संवैधानिक व्यवस्था शरीफों, गरीबों श्रम जीवियों तथा सामान्य नागरिकों के शोषण के उद्देश्य से अपराधियों, पूँजीपतियों, बुद्धिजीवियों तथा राजनेताओं का मिला जुला षडयंत्र है। ऐसी व्यवस्था का एक दिन भी चलते रहना या तो हमारी मजबूरी का प्रतीक है या कायरता का। पांच प्रकार के अपराध और छः प्रकार की समस्याएँ लगातार बढ़ती जा रही है। भ्रष्टाचार भी चरमोत्कर्ष पर है। पूरे भारत की लगभग आधी आबादी श्रमजीवी गरीब ग्रामीण किसानों की है। यह बात सर्वविदित है। किन्तु बुद्धिजीवी दो गुटों में बंटकर इनके शोषण के नये-नये तरीके खोजते रहते हैं। सभी जानते हैं कि आरक्षण के समर्थन या विरोध से श्रमजीवियों को दूर दूर तक कोई लाभ नहीं है। सभी जानते हैं कि मेघा पाटकर के आंदोलन के समर्थन या विरोध से भी यह वर्ग मजबूत नहीं होने वाला। क्योंकि नर्मदा बांध बनने से दूसरे वर्ग के ही कुछ लोगों को लाभ और कुछ हानि होने वाली है। दूसरे वर्ग के ही कुछ लोग पूँजीपतियों से धन लेकर स्वदेषी शीतल पेय, स्वदेषी साबुन, स्वेदषी भाषा और स्वदेषी के नाम पर अनावश्यक आंदोलन खड़े करते रहते हैं जबकि भारत का बच्चा बच्चा समझता है कि आज भारत को स्वदेषी समाज व्यवस्था की सबसे अधिक जरूरत है जिसमें राजनैतिक शासन व्यवस्था का न्यूनतम हस्तक्षेप हो। सम्पूर्ण भारत का आम नागरिक गुलाम मालिक की भूमिका में जीने के लिये मजबूर है जो निर्णय की स्वतंत्रता के मामले में पांच वर्षो तक गुलामी का जीवन जीने के बाद भी एक दिन वोट देने के अधिकार को ही अपने मालिक होने का दंभ समझ लेता है। साम्यवादी, समाजवादी, पूँजीवादी आदि विभिन्न नामों से गुट बना बनाकर ये सब लोग किसी न किसी रूप में प्रथम वर्ग के शोषण और द्वितीय वर्ग के पोषण में ही संलग्न रहते हैं। सम्पूर्ण समाज में से यदि पेशेवर शोषकों को निकाल दें तो सम्पूर्ण समाज लगभग अन्ठानवे प्रतिषत होते हुए भी कि कर्तव्य विमूढ़ है। दो प्रतिषत पेशेवर शोषकों और उनके एजेन्टों के आकर्षक नारों के बीच फंसकर वह बेचारा कई बार हाथ पांव मारता भी है किन्तु हर बार उसे या तो असफलता हाथ लगती है या सामाजिक विघटन। खूब मेहनत करके भी वह परिणाम की ओर नजर दौड़ाता है तो अपने अन्ठानवे प्रतिषत स्वरूप को दो भागों में बाँटकर एक दूसरे के विरूद्ध ही संघर्ष संलग्न पाता है और तब बेचारा आंदोलनो से दूर भजन पूजन क्रिकेट, जुआ आदि से मन बहलाता है। आज भारत की संवैधानिक राजनैतिक व्यवस्था ने इतनी मजबूत पकड़ ली है कि समाज बेचारा छटपटाने से भी महरूम हो गया है, संघर्ष तो वह क्या करेगा। ऐसी विकट गुलामी की व्यवस्था के विरूद्ध नक्सलवाद व्यवस्था परिवर्तन के नाम से मैदान में आया तो किसानों, गरीबों, श्रमजीवियों और ग्रामीणों का उस ओर आकर्षण स्वाभाविक ही था। जो नक्सलवादियों को मिला भी। भारत की सम्पूर्ण संवैधानिक व्यवस्था को इसी तरह चलने देना हमारी कायरता का प्रतीक ही है। इस व्यवस्था को तो बदलना ही होगा। यह व्यवस्था इस तरह चलने नहीं दी जा सकती। इसलिये व्यवस्था परिवर्तन हमारा ऐंसा लक्ष्य है जिसका समर्थन हमें करना ही चाहिये। मैं बचपन से ही अहिंसक विचारों का रहा हूँ। मैने अहिंसा को मानने के साथ साथ जिया भी है किन्तु मैं अहिंसा और कायरता का फर्क भी जानता हूँ जो समान्यतया अहिंसा के पक्षधर शायद बिल्कुल नहीं जानते। मेरे विचार में व्यवस्था परिवर्तन हमारा लक्ष्य है और अहिंसा मार्ग। अहिंसक तरीके से व्यवस्था परिवर्तन श्रेष्ठतम मार्ग है और हम हिंसक तरीके से व्यवस्था परिवर्तन का भरपूर विरोध करते हैं किन्तु यदि वर्तमान व्यवस्था और हिंसक परिवर्तन के बीच एक का चुनाव करना हो तो हम या कम से कम मैं तो वर्तमान व्यवस्था की अपेक्षा हिंसक परिवर्तन को ही ठीक समझूँगा। यही कारण है कि मैने दस वर्ष पूर्व नक्सलवाद पर लेख लिखते समय उनकी तुलना स्वतंत्रता संघर्ष के क्रान्तिकारी भगतसिंह और सुभाष चन्द्र बोस तक से कर दी थी। अब मैंने नक्सलवाद पर फिर से विचार किया तो मुझे नक्सलवाद में व्यवस्था परिवर्तन के स्थान पर सत्ता परिवर्तन के ही सारे लक्षण दिखने लगे। मेरे सामने एक प्रश्न खड़ा हुआ कि व्यवस्था परिवर्तन कीदिशा तानाशाही कीदिशा में हो तब तो समाज और कमजोर होगा तथा आज की अपेक्षा अधिक गुलाम होगा। बहुत प्रयत्न के बाद भी मैं नक्सलवादियों के भावी संवैधानिक स्वरूप के विषय में नही जान सका। काफी चर्चा के बाद भी वे नहीं बता सके कि उनके शासन में संसद कस्टोडियन होगी कि मैनेजर। समाज को वर्तमान की अपेक्षा कौन कौन से अधिक अधिकार होंगे इसका भी कोई स्पष्ट उत्तर नहीं मिला। उनका तो सिर्फ एक ही उत्तर है कि जब व्यवस्था बदलेगी तब सुशासन का जायगा। सुशासन या तो तानाशाही से आ सकता है या स्वशासन से। मुझे चिन्ता हुई कि तानाशाही के माध्यम से सुशासन और वर्तमान अव्यवस्था के बीच यदि एक को चुनना हो तो हम किसे चुनें? मैं तो इसी नतीजे पर पहुँचा कि नक्सलवाद किसी भी रूप में व्यवस्था परिवर्तन नहीं है। नक्सलवाद पूरी तरह हिंसक सत्ता संघर्ष है जो वर्तमान व्यवस्था की कमजोरियों और खराब नीयत का लाभ उठाकर तथा षोषण के विरोध को आधार बनाकर सत्ता परिवर्तन के लिये संघर्षरत है।

मुझे स्पष्ट दिखता है कि यदि नक्सलवाद व्यवस्था परिवर्तन होता तो वह नई व्यवस्था का संवैधानिक स्वरूप अवश्य ही समाज के समक्ष रखता। यदि नक्सलवाद सत्ता परिवर्तन मात्र है तो सत्ता परिवर्तन के अहिंसक प्रयत्नों की अपेक्षा हिंसक प्रयत्नों को अधिक समर्थन कैसे किया जाय ? मैं मानता हूँ कि तानाशाही में लोकतंत्र की अपेक्षा सुशासन की ज्यादा संभावनाएँ होती हैं। नक्सलवाद जब और जहाँ भी आयेगा वहाँ अव्यवस्था तो कम होगी ही किन्तु अव्यवस्था को कम या समाप्त करने के लिये तानाशाही शासन व्यवस्था का समर्थन उचित नहीं। नक्सलवाद हिंसक मार्ग है या अहिंसक यह मेरे निष्कर्ष का आधार नहीं। मेरे निष्कर्ष का आधार तो यह है कि नक्सलवाद एक ऐसी अंधेरी गली तो नही जिसमें से लोक स्वराज्य की और लौटना संभव ही न हो।मुझे तो कुछ ऐसा ही दिखता है। वर्तमान अव्यवस्था और शोषण से मुक्ति कठिन तो दिखती है परन्तु असंभव नहीं। किन्तु नक्सलवादी तानाशाही से मुक्ति की कल्पना ही स्वप्न मात्र होती है। इसलिये ही मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि नक्सलवाद वर्तमान अव्यवस्था का समाधान न होकर स्वयं में एक समस्या है। मैं वर्तमान व्यवस्था को कलंक मानता हूँ। इस व्यवस्था को बदलना ही चाहिये। साथ ही यह भी आवश्यक है कि इस व्यवस्था को लोक स्वराज्य कीदिशा में ही बदलना चाहिये, केन्द्रीयकरण कीदिशा में नहीं। हम लोग इस विकेन्द्रीयकरण कीदिशा में व्यवस्था परिवर्तन के एक प्रयास की ओर अहिंसक तरीके से आगे बढ़ रहे हैं। यदि कोई हिंसक तरीके से भी इसदिशा में बढ़े तो मैं वर्तमान अव्यवस्था के स्थान पर उस व्यवस्था परिवर्तन के कार्य का सीमित समर्थन करूँगा। यदि नक्सलवाद स्वयं को सत्ता परिवर्तन से हटाकर व्यवस्था परिवर्तन मे शामिल करना चाहे तो हम उसका स्वागत करेंगे किन्तु आवश्यक है कि उसकी नीतियाँ सत्ता की अपेक्षा समाज को मजबूत करने की ओर झुकी हों और वह आंदोलन के पूर्व ही अपनी नीतियों का संविधान घोषित करे। यदि नक्सलवाद अपनी नीतियों को स्पष्ट करके यह सिद्ध्र कर दे कि उसका उद्देश्य व्यवस्था परिवर्तन है तो व्यवस्था परिवर्तन अभियान और नक्सलवाद के बीच सिर्फ मार्ग का फर्क होगा, लक्ष्य का नहीं। किन्तु यदि नक्सलवाद का लक्ष्य सत्ता परिवर्तन है, जैसा कि अब दिख रहा है तो व्यवस्था परिवर्तन अभियान से नक्सलवाद का लक्ष्य भी भिन्न होगा और मार्ग भी।

भारत में नक्सलवाद

बजरंग लाल अग्रवाल जून 2007

पिछले दस वर्षो में भारत में तीव्र गति से नक्सलवाद में विस्तार हुआ। नेपाल से आन्ध्र तक एक सुरक्षित गलियारा बनाने में अब छत्तीसगढ़ का एक थोड़ा सा भाग ही शेष बचा है। इस बाधा को दूर करने का भी उनका प्रयत्न जारी है। भारत के अन्य प्रदेशों में भी नक्सलवाद धीरे -धीरे प्रवेश करने के लिये सक्रिय है। बंगाल के नन्दीग्राम प्रकरण ने भी नक्सलवाद को बंगाल में मजबूत किया है । बिहार और झारखण्ड तो पूरी तरह उनके कार्य क्षेत्र में शामिल ही हैं । उड़ीसा, मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र के भी प्रतिवर्ष कुछ नये जिलों में नक्सलवाद का विस्तार दिख रहा है। आंध्र तो उनका गढ़ रहा ही है किन्तुउत्तरप्रदेश के सोनभद्र और मिर्जापुर जिलों में भी इन्होंने उपस्थिति दर्ज करानी शुरू कर दी है। स्पष्ट है कि लगातार इनकी शक्ति में भी विस्तार दिख रहा है और प्रभाव क्षेत्र में भी । एक दो वर्ष तक तो इससे सिर्फ प्रदेश सरकारें ही चिन्तित थीं। किन्तु अब तो धीरे - धीरे केन्द्र सरकार भी चिन्ता व्यक्त करने लगी है मैने स्वयं नक्सलवाद को निकट से देखा है। इनके प्रभाव क्षेत्र में आम लोग राहत महसूस करते हैं। ये त्वरित न्याय और तत्काल दण्ड देते हैं अपराधियों को दण्ड देने में वर्तमान न्यायिक प्रक्रिया की अपेक्षा इनके न्याय में कम गलतियां होती है। अराजकता समाप्त हो जाती है। सम्पन्न लोगो से धन लेकर या सरकारी विभाग से धन छीनकर ये उस क्षेत्र के लोगो को अपनी नक्सलवादी सेना में भर्ती करते हैं और रोजगार देते हैं। इससे वंचित लोगो को रोजगार की राहत मिलती है। ग्रामीण लोगो को सबसे बडी संतुष्टि यह मिलती है कि उनके गांवो में पटवारी, ग्रामसेवक, फारेस्टगार्ड और पुलिस का आवागमन बंद हो जाता है। इनके प्रभाव क्षेत्र में जंगल नही कटते, षराब नही बिकती और भ्रष्टाचार भी कम हो जाता है। दुनियॉ में कहीं भी तानाशाही की प्राथमिकता ऐसे ही हूआ करते है किन्तु कुछ ही समय में उसके दुष्परिणाम भी दिखने लगते है । इनके प्रभाव क्षेत्र में भी वे दुष्परिणाम दिखने लगते है । पहले जिन अपराधियो कि वर्तमान राजनैतिक दलो से साठगाठ थी उन लोगो ने नक्सलवादी बनकर स्वयं को सुरक्षित करना शुरू कर दिया है। ये जब चाहे लडकियों को उठाकर ले जाते है और कोई प्रतिरोध की हिम्मत नहीं है। ये कितनी वसूली करते हैऔर कहॉ खर्च करते है इस पर उपर वालों का नियंत्रण कमजोर होने लगा है। यह वसूली धीरे धीरे अत्याचार तो अब नक्सलवाद के नाम पर अपराध करने लगे है जिसकी न कोई रिपोर्ट हो पाती है न चर्चा। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता भय में बदल जाने का यह परिणाम दिखने लगा है कि वहॉ बढ रहे अनाचार अत्याचार की चर्चा भी बाहर नहीं निकल सकती। नक्सलवाद का समाधान प्रशासनिक है या विकास यह वर्तमान सरकारे तय नहीं कर पा रहीं वर्तमान व्यवस्था का लाभ उठा रहे लोग प्रशासनिक समाधान को महत्वपूर्ण बता रहे है और व्यवस्था से लाभ उठाने की प्रतिक्षा मे खडे लोग विकास पर जोर दे रहे है । जबकि सच्चाई यह है कि दोनो ही गलत है। नक्सलवाद प्रभावित क्षेत्रो में विकास के प्रयत्न नक्सलवाद सहायक होते है क्योकि नक्सलवाद भय से बढता है जन समर्थक से नही एक बात यह भी है कि

नक्सलवाद सरकारी विकास योजनाओ के धन पर बढता है। विकास पर होने वाला अतिरिक्त व्यय उनके आर्थिक संसाधनो मे सहायक होता है। आम लोगो को भी महसूस होता है किसाठ वर्षो वाद उस क्षेत्र पर दिये जाने वाला ध्यान का श्रेय नक्सलियो को ही जाता है ।दूसरी ओर नक्सलवादी प्रभाव से मुक्त क्षेत्र की अराजकता अर्थव्यवस्था उन्हे नक्सलवाद की ओर आकर्शित करती है। जिस देश में साठ वर्षों के बाद भी 26 करोड़ लोग 13 रूपया प्रतिदिन से भी कम पर जिवन जीने को मजबूर हो, वहॉ या तो आत्महत्याएं बढ़ेगी या लोग बन्दूक उठाना शुरू कर देगें। सम्पूर्ण भारत में दोनो ही परिणाम लगातार दिख रहे है इसका समाधान कानुन व्यवस्था से संभव नहीं। इसलिये नक्सलवाद का समाधान कानून व्यवस्था से सभव नहीं। इसलिये नक्सलवाद का समाधान प्रशासनिक होगा या विकास पर गंभीर विचार मंथन की जरूरत है। मेरे विचार में नक्सल प्रभावित क्षेत्रो मे विकास को रोककर सीधे सीधेप्रशासनिकसमाधान पर पुरी ताकत लगा देनी चाहिये। यदि आवश्यकता होतो कुछ समय तक सेना का भी उपयोग कर सकते है दूसरी ओर जो क्षेत्र अब तक नक्सलवाद से अप्रभावित है वहॉ विकास, रोजगार और आर्थिक समानता का अधिकतम प्रयत्न करे यदि आवश्यकता हो तो अन्य योजनाओ से धन रोककर भी इसमे लगावें। हमे नक्सल प्रभावित क्षेत्रो की अलग रणनीति बनानी होगी जिसका अभी पूरी तरह अभाव है। भारत में नक्सलवाद एक गंभीर आंतकवाद की ओर बढ रहा है। समाज अव्यवस्था और नक्सलवाद के बीच एक को समर्थन देने के लिये मजबूर है हिंसक समाधान के प्रति आम नागरिकों का बढता झुकाव एक खतरे का संकेत है। समाज का कर्तव्य है कि वह अव्यवस्था और हिंसक समाधन के बीच किसी अहिंसक और लोकतांत्रिक समाधान का प्रयत्न प्रारम्भ करे तभी नक्सलवाद का समाधान संभव है।

जून 2008 में नक्सलवाद पर प्रश्नोत्तर

प्रश्न:- प्रोफेसर बी0बी0 कुमार ने मुझे एक पुस्तक विचारधारा भेजी है जिसके एक महत्वपूर्ण वैचारिक लेख का शीर्षक है ‘‘नक्सलवाद मिथक और यथार्थ‘‘। इसके लेखक श्री विजय कुमार जी तथा शंकर शरण जी हैं। लेख में कुछ अंश इस प्रकार है। हमारे प्रधानमंत्री कुछ समय से लगातार कह रहे हैं कि हमारी आन्तरिक सुरक्षा को सबसे बड़ा खतरा नक्सली आतंक से है। इसका कारण भी है। देश का लगभग बीस प्रतिशत क्षेत्र और आबादी नक्सली दबाव में आ चुका है। आन्ध्र से लेकर बिहार के सीमान्त तक एक लम्बी भौगोलिक पट्टी नक्सली नियंत्रण की ओर बढ़ रही है। किन्तु इस पर चिन्हित होने के बदले बौद्धिक चर्चाओं में प्रायः सुनने को मिलता है कि नक्सलवाद ‘सामाजिक - आर्थिक समस्याओं‘ का एक परिणाम है। अर्थात् वह समस्याएं मूल दोषी है, नक्सलवादी विचार संगठन और हिंसा नहीं । हमारे यहाँ अधिकांश बंधु भी प्रायः कह बैठते हैं कि नक्सलवाद या माओवाद ‘अपने अस्तित्व से भटक गया है‘ अथवा कि वह हत्यावाद में बदल गया है। ऐसे बयानों में भी एक गम्भीर भ्रांति झलकती है, मानों माओवाद, नक्सलवाद पहले मूलतः कोई अच्छी विचारधार थी जो बाद में पतित हो गई। किन्तु ऐसी ही भ्रामक बातें तीन दशकों से असंख्य पत्रकारों , टिप्पणीकारों, प्रशासकों और बिभिन्न गैर-सरकारी एजेंसियों द्धारा इतनी बार दुहराई गई है कि मानो स्वयं सिद्ध ही बन गई हैं। जब भी नक्सली संगठनों द्धारा हत्याएं या अन्य विध्वंसक कार्यवाईयां होती है, कहीं न कहीं यह जरूर कहा जाता है कि इसके पीछे ‘भूमि सुधार‘ न होना या भूमि प्रश्न का कोई अर्थ समझता हो या नहीं, किन्तु कई पत्रकार व प्रचारक यह दुहराते अवश्य हैं। वे इतना भी नहीं सोचते कि ऐसे तर्क देने का अर्थ यह बनता है कि जब यह तथाकथित भूमि प्रश्न है, तब तक नक्सली गिरोहों द्धारा हत्या और विध्वंस किंचित स्वाभाविक है। दूसरे शब्दों में, ये हत्याएं उतनी निंदनीय नहीं जिती अन्य आपत्तियों द्धारा की गयी हत्याएँ हैं। ऐसे तर्क देते हुए विद्धान पत्रकार नहीं सोचते कि तब कानून, न्याय व्यवस्था और संवैधानिक उपचारों का क्या अर्थ रह जाता है और तब वह किसलिए बनी है? जान पड़ता है कि हमारे अनेकानेक पत्रकार, प्रोफेसर और राजनीतिकर्मी संविधान, कानून, न्यायालय, आदि को विष्व हिन्दू परिषद या अयोध्या विवाद जैसे मामलों में ही सर्वोपरि रखने की जिद करते है। जबकि माओवादी क्रांतिकारियों, उग्र अल्पसंख्यकों, अलगाववादी नेताओं आदि को हमारे बुद्धिजीवियों की ओर से चाहे अघोषित, किन्तु नैतिक छूट मिली हुई है कि वह कानून, संविधान, राष्ट्रीय अखण्डता आदि को घता बताकर अपना आक्रोष जब चाहे, जैसे प्रकट कर सकते हैं। चाहे हत्याएं करके, चाहे किसी का सिर उतार लेने या देश के और टुकड़े करने जैसी मांगे करके। तब किसी को न्यायालय, कानून के समक्ष समानता, मानव अधिकार आदि याद नहीं आता। हमारे बुद्धिजीवियों में यह कितनी खतरनाक प्रवृत्ति है, इसे गम्भीरता से समझा जाना चाहिए। भारत में माओवाद पर अधिकांष टिप्पणियां उसी प्रवृत्ति से ग्रस्त रही है। यदि माओवादी संगठनों के अपने दस्तावेजों और उनके क्रिया-कलापों का मिलाकर अध्ययन करें तो यह बिलकुल साफ हो जाता है। उदाहरण के लिए पिछले दो दशकों से विभिन्न लेखकों -पत्रकारों द्धारा हम सुन रहे है कि मध्य बिहार या आन्ध्रप्रेदेश में उत्पन्न हुएअथवा यह किन्हीं उच्च जातियों के विरूद्ध निम्न -सम्मान की लड़ाई है। या भूमि पाने का संघर्ष है। जबकि वास्तव में यह सभी व्याख्याएँ और टिप्पणियां मनगढ़न्त हैं। क्योंकि माओवादी दलों के कार्यक्रम, विश्लेषण इसकी पुष्टि नहीं करते। आरम्भ से ही

माओवादी राजनीति कुछ सुनिश्चित सिद्धान्तों के आधार पर विकसित हुई, जिसे माओ की घोषणाओं, आह्वानों, किताबों से हू-ब-हू लिया गया था। सच यह है कि माओवादियों ने किन्हीं भूमिहीनों, या किन्हीं निम्न - जातियों के सम्मान, भूमि सुधार या न्यूनतम मजदूरी के लिए अपना आन्दोलन और हिंसा आरम्भ नहीं की थी। किसी माओवादी दस्तावेज में इन सबकी कोई भी चिन्ता या विशेष चिंता दिखाई नहीं पड़ती। इसके स्थान पर प्रत्येक माओवादी पार्टी घोषणा -पत्र बिल्कुल साफ-साफ कहता रहा है कि उनका सम्पूर्ण प्रयत्न राज्य सत्ता पर अधिकार करने के लिए है। वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था को बलपूर्वक खत्म कर सत्ता पर कब्जे के बाद जनता के साथ वही समाजवादी प्रयोग करना है जो माओ ने किया था। इसका सरल अर्थ केवल यह है कि माओवादी सफल हुए तो प्रत्येक क्षेत्र और समुदाय के लोगो को वही नरक भोगना पडा था। भारतीय माओवादी चीन के माओवादी प्रयोगों को भारतीय जनता पर दुहराने की इच्छा रखते हैं। इस स्पष्ट घोषणा के बावजूद हमारे बुद्धिजीवि लोगो को बहलाते है। इस स्पष्ट घोषणा के बावजूद हमारे बुद्धिजीवि लोगों को बहलातें हैं। अभी माओवादियों के हाथों नेपाल का विध्वंस भारत के लिए बड़े संकट का सूचक है। जो भारतीय बुद्धिजीवी नेपाल में माओवादियों के वर्चस्व या ‘‘लोकतंत्र की जीत‘‘पर प्रसन्न हो रहे हैं, वे अपने भविष्य पर पड़ रही काली छाया से अनजान हैं। मई 2006 से नेपाल में जो हो रहा है, उसका गंभीरता से मूल्यांकन करें। कुटनीतिक, रणनीतिक रूप में नेपाल के इस्लामी तथा अमेरिकी मिषनरियों के हाथ में जाने के अनगिनत खुले संकेत मिल रहे हैं। इसमें संदेह नहीं कि नेपाल की दुर्गति में भारत के सेक्यूलरवादी नेताओं का भी बड़ा हाथ रहा है। हमारे देश के गणतंत्र दिवस समारोह में प्रत्येक वर्ष किसी न किसी विदेशी राज्य प्रमुख को मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किया जाता है। क्या कभी नेपाल नरेश को इसके लिए आमंत्रित किया गया? हमने हिन्दू होकर भी जगत के एक मात्र हिन्दू राष्ट्र के प्रति जो व्यवहार किया है, उससे दुनिया के सामने हम स्वयं गिरे हैं। हमारे ऐसे व्यवहार से कोई मुस्लिम या ईसाई देश हमारें सेक्यूलरिज्म ‘ से प्रभावित नहीं हुआ। उल्टे मन ही मन हंसा है। यदि इन सभी बातों पर हम लोग अपनी स्वतंत्र बुद्धि से विचार कर समुचित निष्कर्ष नहीं निकालते तो माओ की धारणा को ही पुष्ट करेंगे जिनका मानना था कि भारतीयों में कोई चरित्र नहीं हैं, जो खोखले शब्दों के भण्डार है तथा भारत एक मंदबुद्धि गाय है जो किसी बैसाखी पर टिकी हैं। यदि हम नक्सलवाद को सामाजिक -आर्थिक समस्याओं को प्रतिक्रिया समझते रहे, तो भारतवासियों के बारे में माओं की टिप्पण को निस्संदेह सही प्रमाणित करेंगे। बिहार में किसानों ने नक्सलवाद से निपटने के लिए रणबीर सेना बनाई। नक्सलवाद पहले आया और सरकार की असफलता के बाद किसन लामबन्द हुए। सरकार मध्यस्थ बन गई। बुद्धिजीवी विचारक और साहित्यकार ऐसी प्रतिक्रिया में ही नक्सलवाद आया हो, जबकि यथार्थ इसके बिल्कुल उलटा है।

समीक्षा -आपने माओवाद का यथार्थ और नक्सलवाद के उद्देश्य का स्पष्ट चित्र खीचा है। आपसे पूरी तरह सहमत हूॅ। दस वर्ष पहले मै नक्सलवाद को व्यवस्था परिवर्तन का हिंसक मार्ग समझता था, किन्तु बाद मे समझ मे आया कि नक्सलवाद सीधे-सीधे सत्ता संघर्ष है। आपने भारत के प्रतिबद्ध वामपंथी बुद्धिजीवियो के जहरिले प्रचार की पोल खोलकर भी अच्छा किया है। आपने विचार, साहित्य, कला,व मानवाधिकार आदि के भिन्न भिन्न रूपो मे नक्सलवाद का प्रचार करने की भी बात कही जिसमें मै सहमत हूॅ। मैने शंकर शरण जी का भाषण भी सुना है। इस विषय पर उनके विचार स्पष्ट रहते ही है, किन्तु कुल मिलाकर उनके विचारो में संघ परिवार के प्रति झुकाव दिखा। यदि अन्य विषयों पर उनकी सोच अधिक अप्रतिबद्ध होती तो और अच्छा होता। यदि हम राजनैतिक उद्देंष्यो को आधार मानें तो संघ परिवार भी तो सत्ता परिवर्तन की ही लड़ाई लड़ रहा है। नक्सलवादी विदेशी माओ से संचालित है और आर्थिक विषमता को आधार बनाकर संघर्ष कर रहे है यह अंतर कोई बहुत बडा अंतर नही है यद्यपि है जरूर। मै यह मानने के लिये तैयार नही कि संघ परिवार का उद्देश्य सांस्कृतिक जागरण है। मैने अपनी प्राथमिकताओं के चार भाग किये है (1) समीक्षा (2) आलोचना (3)विरोध (4) संघर्ष। मैने समीक्षा की श्रेणी मे सर्वोदय, आर्यसमाज गायत्री परिवार, हिन्दु धर्म आदि को रखा है आलोचना की श्रेणी मे इस्लाम, संघ परिवार सभी राजनैतिक दल, साम्यवाद आदि हैं।मैं स्पष्ट कर दूॅ कि मै संघ की तुलना में सर्वोदय की विचार धारा को अधिक अच्छा मानता हूँ क्योंकि राजनैतिक सोच के मामले मे सर्वोदय संघ की अपेक्षा अधिक ठीक है। विरोध की दृष्टि से मै नक्सलवाद मुस्लिम, आतंकवाद, आदि को मानता हूॅ किन्तु संघर्ष के लिए मेरी एक ही लाइन है और वह है लोक स्वराज्य के विपरीत सोच रखने वाला या क्रिया करने वाला व्यक्ति। ऐसा व्यक्ति चाहे किसी राजनैतिक दल का हो या किसी धर्म विशेष से जुडा हो या शान्ति का संदेश वाहक हो या आतंकवादी। जो दूसरो को गुलाम बनाकर रखने की इच्छा रखता है वह मेरा विराधी तो है ही साथ ही मै उसके विरूद्ध अहिंसक संघर्ष की इच्छा भी रखता हॅू। मेरे विचार में इस समय सबसे खतरनाक वह इच्छा है जो दूसरो को अपनी इच्छानुसार संचालित करने की हुई है या असंवैधानिक तिकडम में यह मेरी चिन्ता का विषय नहीं। मै ऐसी तिकड़म करने वालों को आतंकवादियों से भी अधिक घातक मानता हॅू और इसलिये इनके विरूद्ध संघर्ष का ताना- बाना बुनता रहता हूँ। आपने नेपाल में नक्सलवाद के उदय को गंभीर खतरा माना यहां तक मै सहमत हॅू किन्तु

नक्सलवाद की अपेक्षा राजशाही का समर्थन कैसे उचित माना जाए? राजशाही तो नक्सलवाद से अधिक तानाशाही का रूप है। नेपाल में लोकतंत्र और राजशाही के बीच अहिंसक संघर्ष हुंआ। लोकतंत्र जीत नहीं सका और बीच में नक्सलवाद आ गया। हमने समय रहते क्यों नहीं लोकतंत्र की सहायता की? हम और विशेषकर संघ मनोवृत्ति के लोग राजशाही से चिपके रहे। अब भी वे लोग राजशाही का ही समर्थन कर रहे हैं। क्या यही हिन्दुत्व है? धर्मनिपेक्षता और गणराज्य प्रणाली तो हिन्दुत्व का प्राण है। किस हिन्दुत्व में समाज को अधिकार विहीन और राज्य को सर्वाधिकार सम्पन्न की कल्पना है? यदि हिन्दू राष्ट्र की कल्पना में समाज को मालिक और राज्य का स्वागत है और यदि हिन्दू राष्ट्र के नाम पर हिन्दू राज्य और हिन्दू राजा का संकीर्ण सोच छिपा है तो कृपया भारत को ऐसी सोच से दूर रहने दीजिए। नेपाल में हमसे चुक हुई कि हमने लोकतंत्र का समर्थन नहीं किया। अब भारत में भी वही भूल हो रही है कि हम लोकतंत्र के स्थान पर लोक स्वराज्य का समर्थन करने में देर कर रहे है। यदि भारत में भी नक्सलवाद मजबूत हुआ तो दोश किसका? अपनी राजनैतिक भूख मिटाने के लिए हिन्दुत्व की परिभाषाओं से छेड़छाड़ एक ऐसी भूल होगी जिसके भविष्य में बहुत दुष्परिणाम होने निश्चित हैं। अब भी समय है कि आप सब साथी फिर से विचार करें। भारत में भी नेपाल सरीखी भूल दुहराई जा रही है। लोकतंत्र से भारत का हर नागरिक निराश है। संघ परिवार को चाहिए कि वह लोक स्वराज्य की आवाज बुलन्द करे, किन्तु अब भी वह पिछड़ रहा। राईट टू रिकाल एक छोटा सा प्रयत्न है। साम्यवादियों ने तो जल्दी-जल्दी में उसका समर्थन कर दिया, किन्तु संघ परिवार अब भी असमंजस में पड़ा है। परिवार, गाँव व जिले के अधिकारों को संवैधानिक स्वरूप देने की एक सूत्रीय मांग पर संघ परिवार को तत्काल पहल करनी चाहिए। यह ऐसी मांग है जो लोकतंत्र का विकल्प बन सकती है। संघ परिवार का पहल करने की आदत डालनी चाहिए।

नक्सलवाद और समाधान

बजरंग मुनि

आज पूरा देश नक्सलवाद सेचिन्तितहै। मैं विकसित भारत के जिन क्षेत्रों में जाता हूँ वहाँ के श्रोता बड़ी उत्सुकता से मुझसे पूछते हैं कि नक्सलवाद क्या है ? ये लोग कैसे दिखाई देते हैं? आप उस क्षेत्र में किस तरह रहते हैं? आदि- आदि। पूरी भारत सरकार भी नक्सलवाद को भारत की पहली समस्या घोषित करके समाधान की लम्बी चौड़ी तैयारी कर रही है। बैठकें पर बैठकें और रोज नई-नई घोषणाऐं हो रही हैं। आज ही केन्द्रीय गृहमंत्री चिन्दम्बरम जी नें कहा है कि फरवरी से नक्सलवाद नियन्त्रण अभियान प्रारम्भ हो सकता है। इसकी शुरुवात छत्तीसगढ़ के सरगुजा और बस्तर क्षेत्र से होगी। विदित हो कि सरगुजा जिले का जो भाग नक्सलवाद प्रभावित है वह रामानुजगंज क्षेत्र है और सौभाग्य से मैं वहीं का निवासी होने से इस संपूर्ण महासंग्राम का प्रत्यक्षदर्शी भी हूँ। छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री रमणसिंह जी ने भी कहा है कि नक्सलियों को खदेडने के बाद इस मुक्त क्षेत्र का तीव्र विकास भी किया जायगा। दूसरी ओर नक्सलवादियों ने भी चुनौती स्वीकार करने का मन बना लिया है। उनकी भी योजना है कि वे अभियान शुरू होते ही इस क्षेत्र को छोड़ कर चले जायेगें। उनके समर्थक यहाॅ समाज में असंतोश बढ़ाने का काम भिन्न नामों और रूपो में करते रहेगे। एक वर्ष के पूर्व ही केन्द्र का भारी भरकम अभियान दम तोड़ देगा और नक्सलवाद और अधिक सक्रियता और शक्ति से स्थापित हो जायेगा। क्या होगा यह पता नही किन्तु इतना अवश्य होगा कि मेरा गृह क्षेत्र रामानुजगंज इस राष्ट्रिय युद्ध का रणक्षेत्र बनेगा जिसके अच्छे और बुरे परिणाम यहाॅ के लोगों को स्वीकार करने ही होगें। मै स्वयं भी दोनों के संघर्ष की पृष्ठ भूमि को नजदीक से देखता रहता हॅू। यहाॅ तक कि मैने सत्ता के उच्च पदो पर रहकर भी अपने इस क्षेत्र की व्यवस्था को देखा है और नक्सलवादियों के निकट संपर्क से भी। एक ओर तो नक्सलवादी हिंसा का मुखर विरोधी होने के कारण नक्सलवादियों ने मुझे अपना प्रमुख विरोधी मान रखा था तो दूसरी ओर सरकार ने मुझे नक्सलवादी घोषित करके मुझपर सन् छियान्नवें में न्यायालय में आरोप भी लगाया था जो मैने उच्च न्यायालय तक लड़कर मुक्ति पायी। मैने दोनो ओर के आक्रमण झेलकर नक्सलवाद को समझा है। मैने पाया है कि नक्सलवाद किसी भी रूप में व्यवस्था परिवर्तन की लड़ाई नहीं है। सच बात यह है कि नक्सलवाद पूरी तरह सत्ता संघर्ष मात्र है। स्वतंत्रता के समय भारत के राजनेताओं के एक गुट ने गांधी की और दूसरे गुट ने गांधी के ग्राम स्वराज्य की नीतियों की हत्या करके समाज को गुलाम बना लिया था। इन लोगों ने मिलजुल कर समाज पर एक ऐसा संविधान थोप दिया जिसमें लोकतंत्र के नाम पर अनन्त काल तक समाज को गुलाम बनाकर रखने के सभी उपकरण मौजूद है। वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था येन केन प्रकारेण इस लोक तंत्र को सुरक्षित रखना चाहती है और नक्सलवादी इस लोक तंत्र को उखाड़ फेककर अपनी नई व्यवस्था स्थापित करना चाहते है। दोनो के बीच में संघर्ष का प्रतीक बना है भारतीय संविधान। वही संविधान जिसके नाम पर पिछले साठ वर्षो से भारतीय समाज व्यवस्था को गुलाम बनाकर रखा जा रहा है। तथा कोई भी लोकतंत्र वादी यह बताने के लिये तैयार नही कि समाज को राजनैतिक गुलामी से कब और कैसे मुक्ति मिलेगी। वर्तमान लोकतांत्रिक व्यवस्था के दलाल इस व्यवस्था से लाभ उठा उठा कर बदले में इसका गुणगान करते हुये इस अतिवादी प्रशंसा तक चले जाते है कि भारत का वर्तमान

संविधान दुनियॉ का सबसे अच्छा संविधान है या भारत दुनियॉ का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। अनेक साहित्यकार या समाज सेवी तो शतप्रतिशत मतदान या मतदाताजागरण अभियान आदि के नाटको द्वारा वर्तमान व्यवस्था कि दलाली करते मिल जाया करते है और अब तो कुछ धर्मगुरू तक इस चापलूसी में शामिल हो गये है जो स्वभाविक भी है क्योकि वर्तमान लोकतांत्रिक व्यवस्था ने ही तो उन्हें इस तरह बिना मेहनत के ही उच्च सुविधाएँ संग्रह करने की छूट दी है। सम्पन्नता सुविधा और अधिकारों की इस संवैधानिक लूट का स्वामित्व अपने हाथ में लेने का हिसंक प्रयास ही नक्सलवाद है। विभिन्न राजनैतिक दल लोकतंत्र की दुहाई देकर संवैधानिक तरीके से इस लूट के स्वामित्व पर कब्जा बनाये रखना चाहते है, तो दूसरी ओर अनेक दुसाहसी इस प्रयास में स्वयं को असमर्थ पाकर लोक तंत्र संविधान आदि का विरोध करके इस स्वामित्व को प्राप्त करना चाहते है और इस सफलता के लिये हिंसा ही सबसे अच्छा समाधान दिखता है। आज वर्तमान लोकतांत्रिक संवैधानिक व्यवस्था नागरिकों से असीमित धन टैक्स के रूप में वसूल कर उस टैक्स का कुछ भाग सेना पुलिस पर खर्च करती है और शेष को अपने दलालो पर, अपनी व्यवस्था पर, तथा कुछ बचा धन नागरिकों की सुख सुविधा पर खर्च करती है। यही सेना और पुलिस वर्तमान व्यवस्था को समाज को गुलाम बनकर रखने में मदद करती है। नक्सलवादी भी ठीक उसी मार्ग पर चलकर टैक्स के रूप में समाज से बेतहाशा धन वसूलते है, अपनी सेना तैयार करते है, मानवाधिकार कार्यकर्ता और साहित्यकार रूपी दलाल खड़े करते है तथा कुछ धन सामाजिक विकास पर भी लगाया करते है। उद्देश्य, लक्ष्य और मार्ग दोनो का एक ही है कि समाज को लम्बे समय तक गुलाम बनाकर रखा जाये और इस कार्य के लिये जनहित का ढ़ोंग किया जाय। गंभीरता पूर्वक विचार करिये की नक्सलवादियों की प्रशंसा करने वाले मानवाधिकार कार्यकर्ता या साहित्यकारों का खर्च कहॉ से आता है। इन सबका कोई अपना व्यवसाय नहीं है। जिस तरह कुछ दिन पहले मेघा पाटकर संदीप पांडे आदि का वस्तर में उन्हीं की भाषा में नीचे उतकर वहॉ के सरकारी एजेन्टों ने जनहित के नाम पर विरोध किया तब इन्हें अपने बचाव के लिये गांधी याद आये अन्यथा नक्सलवादियों की प्रशंसा करते समय तो गांधी कभी याद नही आते थे । इनका न गांधीवाद से काई संबंध है न ही मानवाधिकार से । ये तो सिर्फ नक्सलवादी हिंसा के समर्थन का व्यवसाय करने वाले लोग है जो गांधी और गांधीवाद की दुकानदारी करते रहते है। ऐसे लोग न समाज के लिये कभी समस्या है, न ही समाधान। ये तो समाज को गुलाम बनाकर रखने के काम में लगे संघर्षरत दो गुटों में से एक के सिपाही मात्र है। सर्वाधिक चिन्ता की बात यह है कि इस संघर्ष मे होने वाले खर्च की व्यवस्था कहॉ से होगी। न तो सरकार का कुछ खर्च होना है न ही नक्सलवादियों का। दोनो ही पक्ष जो भी बन्दूक पिस्तौल गोला बारूद खरीदेगें उसका सारा खर्च हमसे ही वसूल करेगें। इनके जो सैनिक मरेंगे उसका मुआबजा भी हमसे ही वसूला जायेगा । दोनों पक्ष हमारे लिये संघर्ष कर रहे है। किन्तु दोनों ने ही हमसे स्वीकृति या सहमति नही ली । अपने कुछ एजेन्टो की सहमति को ही जन सहमति घोषित कर दिया गया है। अभी अभी दिसम्बर माह में ही मैने एक सौ तेरह गांवों मे भ्रमण करके पाया कि गांवो की जनता वर्तमान आकंठ भ्रष्टाचार में डूबी पंचायत व्यवस्था से पूरी तरह त्रस्त है तो दूसरी ओर नक्सलवाद के नाम पर भी उसे अज्ञात तानाशाही का ही भय सता रहा है। जनता क्या करे उसे समझ में ही नही आ रहा। दोनो ही पक्ष पूरी तरह युद्ध के लिये तैयार है। युद्ध हमारे क्षेत्र में ही शुरू होना है। अज्ञात आशंकाएँ घर कर रही है। मार्ग दिख नही रहा। ऐसे ही संकट काल में रामचन्द्रपुर विकास खण्ड के लोगो ने दो दिनो तक बैठकर युद्ध विराम का फार्मूला निकाला कि दोनो ही पक्ष जिस समाज के लिये संघर्ष की तैयारी कर रहे है, यदि उस समाज को ही स्वतंत्रता दे दी जाये तो दोनों के बीच झगडा क्या रहेगा। समाज की पहली इकाई है परिवार और दूसरी है गांव। वर्तमान में परिवार की चर्चा हम अलग से कर लेगे। यदि समाज की प्रथम संवैधानिक इकाई ग्राम सभा को वास्तविक अधिकार सम्पन्न बनाकर उसे सक्रिय और सशक्त बना दिया जावें तो दोनो पक्षो के बीच टकराव का आधार ही क्या है ? दोनो ही पक्ष आश्वासन दे कि बिना ग्राम सभा की स्वीकृति या अनुमति के न कोई नया कानून समाज पर थोपा जायेगा न ही कोई टैक्स लादा जायेगा। यदि ग्राम सभा वर्तमान किसी कानून को भी अपने ग्राम क्षेत्र में अनावश्यक समझेगी तो उस पर गंभीरता पूर्वक विचार किया जायेगा। नक्सलवादियों का भी कोई सुझाव हो तो वे ग्राम सभा को सहमत करे और सरकार भी वही करने की घोषणा कर दे तो टकराव का कोई और कारण ही नही है। बहुत आसान सा तो मार्ग है कि दोनो पक्ष समाज की चिन्ता करना छोड़कर समाज को अपनी चिन्ता स्वयं करने की स्वतंत्रता दे दे तो हो गया समाधान। सरकार बहाना बनाती है कि गांव के लोग ग्राम सभा मे नही आते। गांव के लोग ग्राम सभा को सरकारी नाटक मानकर उस पर विश्वाश ही नही रखते। नक्सलवादी ग्राम सभा पर ही भरोसा नही करके अपनी बन्दूक पर ही भरोसा करते है। दोनो ही पक्ष समाज को ढाल बनाकर एक दूसरे से सत्ता संघर्ष की तैयारी कर रहे है और चिन्ता क्षेत्र के नागरिकों को सता रही है कि इस युद्ध में उनका क्या होगा? मै पूरी तरह आश्वस्त हूँ कि वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था की नीतियॉ ही गलत नही है बल्कि नीयत ही गलत है। विकास का मार्ग तो एक ढोंग है। यदि खर्च किये जाने वाले धन मे से सिर्फ कमीशन ही बन्द हो जाये तो विकास की सारी पोल खुल जायेगी। धन तो इसलिये सड़को पर बह रहा है कि उसमें सभी सत्ता सम्बद्ध

तथा नक्सलवाद समर्थित प्रमुख लोगो को कुछ न कुछ कमाई होती रहती है। ये सब लोग विकास का इसलिय तो रोना रोते है । नक्सलवादी विकास की मांग करते है और विकास में बाधा भी पहुँचाते है। दूसरी ओर सरकारी पक्ष के लोगों का बस चले तो वे विकास का सारा का सारा पैसा ही मिलकर आपस में बांट ले । साथ में दोनों ही पक्ष लगातार विकास की ही रट भी लगाते रहते है। मैने स्वयं भी इस विषय पर खूब सोचा है। नक्सलवाद का समाधान न तो विकास है न ही बन्दूक। नक्सलवाद का एक ही समाधान है स्थानीय स्वायतता जिसका संषोधित तरीका है ग्राम सभा सशक्तिकरण। यह सशक्तिकरण न कानून से होगा न ही हिंसा से। यह सशक्तिकरण होगा ग्राम सभा का आत्मविश्वाश और मनोबल बढाने से । सरकार अपने पंच सरपंच और सचिव के भ्रष्टाचार पर रोक लगा दे और यदि आवश्यक हो तो कुछ समय के लिये पूरे धन का ही आबंटन रोक दे तो संघर्ष रत दोनों ही पक्ष ग्राम सभा के महत्व को स्वीकार करने लग जायेगें। पंच सरपंच पद के लिये होने वाले संघर्ष में कही लेश मात्र भी जन सेवा का भाव न होकर शुद्ध व्यवसाय है। यदि यह व्यवसाय ही है तो नक्सलवादी भी हिस्सा खोजेगें ही। इसमे कुछ भी अस्वाभाविक नही है। मेरी तो यह सलाह है कि रामचन्द्रपुर विकास खण्ड ने नक्सलवाद के समाधान के लिये बन्दूक और विकास से हटकर जो ग्राम सभा सशक्तिकरण का प्रयोग शुरू किया है उसे दोनो ही पक्ष स्वीकार करें जिससे संभावित युद्ध की विभीशका से बचा जा सके।

नक्सलवाद सुरक्षित, चिदम्बरम् दिग्विजय आमने-सामने

मैने पूर्व में लिखा है कि भारत में लोकतंत्र विफल हो रहा है। भारत के लोकतंत्र को या तो लोक स्वराज्य की शुद्ध में ले जाना होगा या तानाशाही अपरिहार्य है। तीसरा कोई मार्ग नहीं है। नक्सलवादियों ने पूरी स्थिति का बहुत सूक्ष्म विश्लेषण किया और परिणाम निकला कि भारतीय लोकतंत्र पर चौतरफा हमला से लोकतंत्र को तानाशाही में बदलने में सफल होना संभव है। बंगाल के नक्सलवाड़ी से प्रारंभ इस अभियान को पचीस तीस वर्षो से कभी और कहीं चुनौती नहीं मिली। नक्सलवाद लगातार बढ़ता ही गया और बढ़ते बढ़ते नेपाल से आंध्र तक को जोड़ने में सिर्फ छत्तीसगढ़ के कुछ कदम ही बचे थे कि छत्तीसगढ़ सरकार ने उसका घोड़ा पकड़ लिया और चुनौती दे दी। नक्सलवाद अपने काल में व्यवस्था परिवर्तन से शुरू हुआ था किन्तु कानू सान्याल की टीम को किनारे करके नक्सलवाद सत्ता परिवर्तन को लक्ष्य बना बैठा और लक्ष्य बदलते ही वह वह सरकार की आंख की किरकरी बनने लगा। छत्तीसगढ़ टकराव का केन्द्र बनना शुरू हुआ। छत्तीसगढ़ सरकार बिहार, झारखण्ड दिशा से आने वाले नक्सलवाद को तो अपने क्षेत्र में रोकने में सफल हुई किन्तु आन्ध्र से आने वाला नक्सलवाद अधिक गंभीर और सुनियोजित था। इसलिये बस्तर जिला इस टकराव का मुख्य केन्द्र बना। टकराव में छत्तीसगढ़ सरकार ने भरपूर ताकत लगाई किन्तु नक्सलवादी भारी पड़े और पुलिस को भारी नुकसान पहुँचाते रहे। नक्सलवादियों को छत्तीसगढ़ सरकार रोक तो नही सकी किन्तु उसने हार भी नहीं मानी। छत्तीसगढ़ सरकार ने अपनी सारी शक्ति और बुद्धि इसमें लगा दी । एस पी ओ जैसे अवैधानिक पद बना दिये जिसे सुप्रीम कोर्ट तक ने अवैध बता दिया, पेशेवर मानवाधिकार कार्यकर्त्ताओं को नाको चने चबवा दिये । विनायक सेन तो परास्त हुए ही, मेघा पाटकर, संदीप पांडे अरून्धति राय जैसो को भी उनकी औकात बता दी । नक्सलवादियों के बहुरूपिये कलाकारो को भी पीछे ढकेल कर अपने कलाकारों साहित्यकारों को आगे कर दिया। समाज में नक्सलवाद के विरूद्ध प्रबल जनमत भी खड़ा करने मे सफलता पा ली किन्तु सब कुछ करने के बाद भी छत्तीसगढ़ सरकार उन्हें पराजित नहीं कर सकी भले ही उसने हार भी नही मानी। उधर केन्द्र सरकार में भी शिवराज पाटिल की जगह एक संवेदनशील गृहमंत्री के रूप में चिदम्बरम् स्थापित हो गये। चिदम्बरम् ने नक्सलवाद को एक गंभीर राष्ट्रिय खतरे के रूप में समझा। गृहमंत्री को प्रधानमंत्री का भी भरपूर समर्थन मिला तथा सोनिया जी का भी। इन्होंने बिल्कुल सधे हुए कदमों से नक्सलवाद की घेरे बन्दी शुरू की। इनकी योजना और प्रचार से ही नक्सलवादियों का मनोबल टूटने लगा। नक्सलवादियों का मनोबल संभालने के लिये उनकी मानवाधिकारवादी टीम, साहित्यकार, कलाकार, गांधीवादी, शुभचिंतक आदि ने भी भरपूर जोर लगाया किन्तु गृहमंत्री की दृढ़ इच्छा शक्ति को नही डिगा सके। नक्सलवादी भी पराजय निकट देख रहे थे तथा सरकार भी समझ रही थी कि बिना टकराव के ही नक्सलवादी परास्त हो जायेंगे । मुझे स्वयं भी ऐसा ही लगता था। तभी एकाएक नक्सलवादियों ने आक्रमण कर दिया और सरकार के छिहत्तर जवानों की हत्या करके अपनी मजबूत स्थिति सिद्ध कर दी। इस टकराव में भारत सरकार का नुकसान उतना ज्यादा नही हुआ जितना उसका मनोबल टूटा। युद्ध काल में कभी कभी रणनीतिक चूक नुकसान का आधार बनती ही है। पूरी लडाई भारत प्रशासित क्षेत्र में न होकर नक्सल नियंत्रित क्षेत्र में हुई जहॉ कई वर्षो से उनका नियंत्रण था। उन्होने किसी योजना के अन्तर्गत सरकार को बहुत तेजी से आगे बढ़ने दिया और जब ये बिना मजबूती के उत्साह में ही आगे चले गये तो तीन तरफ से घेर कर इन्हें मार दिया। कुल मिलाकर यही रणनीतिक चूक हुई जो ऐसे समय में होना स्वभाविक है। किन्तु ऐसी चूक सरकार की इच्छा शक्ति को मजबूत करने के स्थान पर राजनैतिक प्रतिद्वंदिता में उलझ गई। स्पष्ट है कि भारत में गृहमंत्री के रूप में चिदम्बरम् की छवि बहुत

तेजी से ऊपर जा रही थी। ऐसा लगता था कि सरदार पटेल के बाद पहली बार कोई सफल गृहमंत्री मिला है। कम बोलना और संतुलित बोलना तो पहले से ही इनका गुण रहा है किन्तु समाज में अपने कथन की विश्वसनीयता स्थापित करना आसान काम नही होता जो इन्होंने बना ली थी। आम लोग समझते थे कि चिदम्बरम् कोई हवाई या बनावटी बात नही कह रहे। एक दूसरा गुण इनका और दिखा कि इन्होंने दलगत सोच को किनारे रख कर योजना पर काम किया। छत्तीसगढ़ में भाजपा की सरकार है और चिदम्बरम् कांग्रेस सरकार के केन्द्रीय मंत्री। किन्तु इन्होंने राजनैतिक स्वार्थ को बाधक नहीं बनने दिया। ये दोनो कारण चिदम्बरम् के लिये भारी पड़े। नक्सलवाद नियंत्रण गृहमंत्री की प्रथम प्राथमिकता थी। इस कार्य के बीच में जो भी रोड़ा बनने की कोशिश किया उसे चिदम्बरम् ने साफ तौर पर समझा दिया। नीतिश कुमार को बुरा लगा तो लगता रहे। बुद्धदेव भट्टाचार्य ने रोड़ा अटकाया तो चिदम्बरम् जी ने झिड़क दिया। शिबू सोरेन जब नक्सलवाद के संबंध में आगे पीछे देखने लगे तो उन्हे कड़ाई से कह दिया गया। साफ संदेश दिया गया कि नक्सलवाद नियंत्रण हमारी तात्कालिक आवश्यकता है और इसे हर हाल में निपटाना है। स्वाभाविक ही था कि चिदम्बरम् के समक्ष ढुलमुल लोग सामाजिक प्रतिष्ठा में कमजोर दिखने लगे और चिदम्बरम् से इर्ष्या करने लगे। इर्ष्या न बुद्धदेव जी को हुई न नीतिश जी को और न ही शिबू सोरेन को क्योकि ये तो विपक्षी थे। इर्ष्या सिर्फ कांग्रेस में हुई जिसमें अब तक दिग्विजय सिंह जी का ही नाम स्पष्ट हुआ है। मणिशंकर अय्यर ने एक सैद्धान्तिक बात मात्र कही थी जो कही भी टकराव या इर्ष्या के रूप में नही थी। किन्तु दिग्विजय जी का कथन पूरी तरह एक राजनैतिक टकराव मात्र था जो चिदम्बरम् की बढ़ती सफलता और लोकप्रियता के विरूद्ध मन का गुबार था। ऐसे ही समय में दंतेवाड़ा संहार की घटना घटित हई। नीतिश कुमार तथा बुद्धदेव जी ने तो विपक्षी के अनुरूप थोड़ी सी बात कही किन्तु दिग्विजय सिंह की टिप्पणी बहुत गंभीर और मारक थी। अन्य आलोचक तो सामने नही आये किन्तु होंगे तो अवश्य ही। दिग्विजय सिंह जी के पीछे भी किसी और बड़ी हस्ती का इशारा हो सकता है जो शायद बाद में पता चले। मैं आपको याद करा दूॅ कि छत्तीसगढ़ का वह क्षेत्र जहॉ आज नक्सलवाद है वह मध्यप्रदेश का ही हिस्सा था जिसके मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह रहे। नक्सलवाद की बीमारी उनके ही कार्यकाल में छत्तीसगढ़ में शुरू हुई थी जिसके बढ़ते बढ़ते इतना गंभीर रूप लेने पर गृहमंत्री को सम्हालने की पहल करनी पड़ रही है। दिग्विजय सिंह नक्सलवाद का आज जो समाधान बता रहे है उस समाधान का उपयोग उन्होंने अपने कार्यकाल में किया होता तो यह बीमारी पैदा ही नही होती । जिस समय आपको विकास की गंगा बहानी थी उस समय तो आप छत्तीसगढ़ के सरगुजा, बस्तर जिलों काशोषणकरते रहे और अब जब बीमारी आपरेशन टेबुल तक आ गई तब आप गृहमंत्री को विकास की सीख दे रहे है। दिग्विजय सिंह जी मंत्रीमंडल की बारीकी जानते है। विकास या अन्य सभी उपाय गृहमंत्रालय का काम नही है। आप विकास की सलाह गृहमंत्री को क्यो दे रहे है ? यह सलाह तो सोनिया मनमोहन जोडी को दीजिये। मुझे दिग्विजय सिंह जी की पुरानी घटनाएँ याद है। मै भी तो छत्तीसगढ़ के उसी सरगुजा जिले के उसी शहर का हूॅ जहॉ दिग्विजय सिंह जी के शासन काल में सबसे पहले नक्सलवाद का प्रवेश हुआ। दिग्विजय सिंह जानते थे कि यदि लोक स्वराज्य मजबूत हुआ तो नक्सलवाद आ ही नहीं सकता। रामानुजगंज शहर लोकस्वराज्य का प्रयोग कर रहा था। सन् छियान्नवें में ही दिग्विजय सिंह जी ने भरपूर आक्रमण करके लोकस्वराज्य व्यवस्था को तहस नहस कर दिया। सरगुजा के एक साप्ताहिक (सरगुजा समाचार) ने तो यहॉ तक लिखा कि रामानुजगंज की व्यवस्था पर यह आक्रमण नक्सलवाद को अप्रत्यक्ष आमंत्रण है। पूरा आक्रमण दिग्विजय जी के व्यक्तिगत मार्गदर्शन में पूरा हुआ था। आपने उस समय के लोक स्वराज्य समर्थको को नक्सलवादी घोषित करवा दिया था जिसका न्यायालयीन परिणाम प्रशासनिक अधिकारी भुगत रहे है और आपने अपना पल्ला झाड़ लिया। आपको उत्तर देना चाहिये कि नक्सलवाद के सरगुजा प्रवेश में आपकी भूमिका क्या थी और क्यों थी? यदि विकास का अभाव ही कारण था तो उस समय तो मुख्यमंत्री आप थे। इन सब अत्याचारों के बाद आपने मध्यप्रदेश में जो पंचायती राज्य को मजबूत किया उसका मै हमेशा प्रशंसकरहा और आज भी हूँ किन्तु आज आपने व्यक्तिगत राजनैतिक द्वेश के कारण गृहमंत्री पर जो आक्षेप लगाये उन आरोपों ने मुझे मजबूर कर दिया कि मै आपका ढ़का आवरण स्पष्ट कर दूॅ। गृहमंत्री की रणनीतिक चूक का लाभ उठाकर आपने जो दांव खेला है वह पूरी तरह निन्दनीय है आपको यह कलंक धोना ही चाहिये। सबसे बड़ा सवाल तो यह है कि नक्सलवाद के समाधान की अन्य सलाहों से गृहमंत्री का क्या संबंध है ? ये सलाहें अन्य मंत्रालयों को क्यों नही ? ऐसी सलाह वह व्यक्ति दे जो स्वयं उस क्षेत्र का मुख्यमंत्री रहा हो और उसी के कार्यकाल में नक्सलवाद पनपा भी हो और बढ़ा भी हो तब ऐसे आलोचक की नीयत में तो खोट दिखता ही है। यह संदेह उस समय और गंभीर हो जाता है जब दिग्विजय सिंह जी के प्रमुख सलाहकार ब्रह्मदेव शर्मा को नक्सलवादियों ने अपना मध्यस्थ बनाने का प्रस्ताव रखा हो। यह कैसा संयोग है कि ब्रह्मदेव जी शर्मा नक्सलवादियों के प्रस्ताव और आप गृहमंत्री के सलाहकार। अच्छा हुआ कि आप सामने आ गये अन्यथा भ्रम ही बना रहता कि कौन महापुरुष हैं जो गृहमंत्री को ऐसी सलाह दे रहे है। जहॉ तक नक्सलवाद का संबंध है तो मै पहले भी मानता था और अब भी मानता हूॅ कि नक्सलवाद का समाधान न विकास से होगा न बन्दूक

से। इसका दूर दूर तक कोई संबंध व्यवस्था परिवर्तन से नही है। इसका सीधा उद्देश्य सत्ता संघर्ष है। अर्थात् वर्तमान लोकतंत्र कुछ मुट्ठी भर लोगों को सत्ता सुख सुविधा सम्मान की छूट देता है। नक्सलवादी वर्तमान लूट का अधिकार अपने पास करना चाहते है। इसकी लडाई वे वर्तमान संवैधानिक व्यवस्था के विरूद्ध लड़ रहे है। न सरकार का उद्देश्य लोक स्वराज्य है न नक्सलवादियों का। दोनों समाज को गुलाम बनाकर रखना चाहते है। वर्तमान व्यवस्था ने हम पर एक ऐसा संविधान बनाकर थोप दिया है जिसे हटाकर नक्सलवादी अपने संविधान में क्या लिखेंगे वह पता नहीं। इसलिये वर्तमान टकराव में समाज की कहीं कोई विशेष भूमिका नही है। किन्तु यदि कोई व्यक्ति ऐसी जवानों की शहादत से अपनी राजनैतिक रोटी सेकनी शुरू कर दे तो उसके इस प्रयत्न की एक स्वर से निन्दा करनी चाहिये। अन्त मे मैं तो इतना ही कहना चाहता हूँ कि गृहमंत्री चिदम्बरम् जी ने ऐसी आलोचनाओं के उत्तर में पद से त्याग पत्र देकर एक अच्छा उत्तर दिया और प्रधान मंत्री की सलाह पर त्यागपत्र वापस लेकर उससे भी अच्छा कार्य किया है। यदि देश नक्सलवाद का कोई अन्य समाधान निकाल लेता है तो उसमें गृहमंत्री को कोई आपत्ति न रही है न है। किन्तु यदि नक्सलवाद के समाधान की उम्मीदें गृहमंत्रालय पर ही निर्भर है तो चिदम्बरम् जी को बिल्कुल भी निराश होने की जरूरत नहीं । देश पूरी तरह आपके साथ है।

2013 घटनाएँ

छत्तीसगढ़ सरकार ने नक्सलवादी सत्ता पलट घोड़े को पकड़ लिया। केन्द सरकार भी छत्तीसगढ़ सरकार के समर्थन मे आई। नक्सलवादियों के लिये भी जीवन मरण का प्रश्न था। नक्सलवादियों ने सरकार की चूक का लाभ उठाकर छिहत्तर सैनिकों की हत्या कर दी। गृह मंत्री चिदम्बरम ने कडा स्टैन्ड लेना चाहा। नक्सलवाद समर्थक मानवाधिकारवादी तथा सर्वोदयियों के हाथ पांव फूल गये। आनन फानन मे रायपुर से दंतेवाडा तक की शांति मार्च का आयोजन हुआ। स्वामी अग्निवेष अरून्धती राय, नारायण देसाई, राधा भट्ट, केयूर भूषण आदि तो लम्बे समय से विख्यात रहे हैं कि जब हिंसक वामपंथी तथा मुस्लिम आतंकवादी खतरे में आवें तो तुरंत शान्ति की आवाज बुलन्द करते हैं। लोकतंत्र के विरूद्ध साम्यवाद तथा हिन्दूत्व के विरूद्ध इस्लाम का समर्थन करने के लिये ये हमेशा खाली रहते हैं। हमने देखा है कि जब कांग्रेस की मनमोहन सोनिया जोडी ने साम्यवादियों से दो दो हाथ करने की ठान ली थी तब एकमात्र थोडे से सर्वोदयी ही दिखे जिन्होने परमाणु बिजली के खिलाफ जन्तर मन्तर पर धरना दिया था और सरकार के विरूद्ध वामपंथ का समर्थन किया था । संसद पर हुऐ आक्रमण के आरोप से मुक्त प्रोफेसर गीलानी को एकमात्र कुछ सर्वोदयवालो ने ही बम्बई मे सम्मान दिया था। बंगाल मे जब वामपंथी भट्टाचार्य और नक्सलवाद के बीच संघर्ष हुआ तब भी इन सबने वामपंथ के विरूद्ध हिंसक नक्सलवाद का समर्थन किया था। लोकतंत्र, अमेरिका, हिन्दुत्व, पूजीवाद ,निजीकरण जैसी किसी भी योजना के विरूद्ध बिना गुण दोष की समीक्षा किये ये समर्थन के लिये तैयार मिलेगें। अभी भी वही हुआ किन्तु छत्तीसगढ़ की जनता से इन शान्ति दूतो का खुलकर विरोध हुआ। रायपुर से लेकर दंतेवाडा तक इन शान्ति दूतो की ऐसी छीछालेदर हुई कि ये छत्तीसगढ़ से बाहर ही जाकर दम ले सके। इन शान्तिदूतो की गलत नीतियों के कारण बेचारे गांधी को भी कई जगह गांलियॉ सुननी पडी जबकि गाँधी पूरी तरह इन नीतियों के विरूद्ध थे। गांधी जी अहिंसा को शस्त्र मानते थे। उनका मत था कि अहिंसक प्रतिरोध हिंसक प्रतिरोध की अपेक्षा अधिक प्रभावी होता है। गाँधी जी यदि जीवित होते तो वे नक्सलवाद के विरूद्ध अहिंसक प्रतिरोध का नेतृत्व करते और उसके बाद सरकार को शान्ति की सलाह देते। हमारे तथा कथित गांधी नाम के व्यवसायी सरकारी हिंसा के खिलाफ ही अहिंसक प्रतिरोध कर रहे हैं और जब सरकार परास्त होकर भारत नेपाल बन जायगा तब ये शान्ति दूत नक्सलियों को शान्ति की सलाह देगें।। जिन लोंगों को आज तक यही नहीं पता है कि प्रतिरोध किसके विरूद्ध करना है और शान्ति की सलाह किसे देनी है उसकी चर्चा कैसे करें यही समझ में नहीं आता। स्पष्ट है कि वर्तमान मे तीन पक्ष है (1) समाज (2) समाज को गुलाम बनाकर रखने वाला वर्तमान लोकतंत्र (3) वर्तमान लोकतंत्र को हटाकर तानाशाही लाने वाला नक्सलवाद। समाज वर्तमान लोकतंत्र से मुक्ति के लिये छटपटा रहा है किन्तु उस मुक्ति के लिये वह तानाशाही के साथ कोई समझौता नहीं कर सकता । हजार बार पूछने के बाद भी नक्सलवादी आज तक नही बता सके कि उनका भावी संविधान कैसा होगा? यदि ये शान्ति दूत ब्रम्हदेव शर्मा केयूर भूषण या अन्य जो भी हो , ऐसी भावी रूपरेखा की जानकारी रखते हो तो उसे सार्वजनिक करने में कठिनाई क्या है और यदि ऐसी जानकारी नहीं है तो काहे को वहॉ नक्सलवाद के वकील बनने गये थे। ठाकुर दास जी बंग के नेतृत्व में लोक स्वराज्य की योजना बनी। अमरनाथ भाई ब्रम्हदेव शर्मा राधा भट्ट आदि उस योजना में शामिल रहें।ग्राम सभा सशक्तिकरण अभियान शुरू हुआ। दोनो पक्षो से निवेदन किया गया कि वे ग्राम सभा सशक्तिकरण के पक्ष मे सहमत हो ।सरकार ने आंशिक सहमति व्यक्त की। नक्सलवादियों ने कोई उत्तर नही दिया। क्या नक्सलवादी तैयार है कि ग्राम सभा जो भी निर्णय लेगी उसे वे मानेगें ? सरकार ग्राम सभा सशक्तिकरण का जैसा नाटक कर रही है , नक्सली तो उतना नाटक भी नहीं कर रहे। यदि नक्सली ग्राम सभा को सर्वोच्च नहीं मान सकते और वर्तमान सरकार ऐसे नक्सलियों पर अमानवीय अत्याचार करे तो हमें क्यों सरकार को समझाने की पहल

करनी चाहिये। ग्राम सभा सशक्तिकरण के लिये राधा भट्ट, केयूर भूषण ,अग्निवेष को फुर्सत नहीं है किन्तु जब सरकार टाइट होने लगी तो ये लोग शांति दूत बन कर आ गये। ये लोग गांधी के नाम पर कलंक हैं। ये वास्तव में शांतिवादी हैं तो नक्सलवाद पर एक सर्वोदय सम्मेलन बुलायें। उस सम्मेलन में खुले विचार विमर्ष को होने दें। मैं उस सम्मेलन में प्रमाणित करूंगा क इन शांतिदूतों का अति वादी वामपंथ के प्रति अधिक झुकाव है। मैं सबके साथ रहा हूँ तो मुझे अन्दर तक पता तो है ही। क्या दिक्कत है खुली चर्चा में? जिस मीटिंग में मैं रहूंगा उसमें ये नहीं आयेंगे, क्योंकि पोल खुलने का डर सता रहा है। ये लोग कहीं भी जायें, कुछ भी विचार रखें उससे हमें कोई आपत्ति नहीं। यह उन सबका विशेष अधिकार हैं। मुझे आपत्ति है इन द्वारा गाँधी के नाम का दुरूपयोग करने पर। आप गाँधी का नाम क्यों शामिल करते है ऐसे गाँधी विरोधी कार्यो के लियें। गाँधी स्वयं स्वतंत्रता संघर्ष से सम्बद्ध थे। उन्हे लगता था कि हिंसा स्वतंत्रता संघर्ष को कमजोर करेगी। उन्होने हिंसा का विरोध किया। यदि गांधी स्वतंत्रता संघर्ष में अग्रणी न होकर किन्ही अन्य समाज सुधार के कार्यो में संलग्न होते किन्तु जब गरम दल के लोग अंग्रेजों के साथ हिंसक लडाई लड़ते तो गाँधी गरम दल वालो के विरूद्ध बोलते तो गाँधी भी उसी तरह गाली खाते जैसे आप छत्तीसगढ में खाकर आये है। या तो आप स्पष्ट करिये कि आप हिंसक तानाशाही के विरूद्ध कोई अहिंसक संघर्ष की योजना बना रहे है तो आपकी शान्ति यात्रा को भरपूर समर्थन मिलेगा अन्यथा आप अपनी बात रखिये तो हमें उससे कोई दिक्कत नहीं है। हम आपका विरोध नहीं करेंगें किन्तु यदि आपने गाँधी का नाम बीच में घुसाकर कुछ किया तो हम आपका अवश्य ही विरोध करेंगें क्योकि न तो गाँधी आपका अकेले का है न ही गांधी आप सरीखा कायर है जो हिंसा के विरूद्ध खडा न होकर हिंसक मनोवृत्ति की ढाल बन जावें। अभी दंतेवाडा में एक बस पर आक्रमण करके पैतीस लोंगों की हत्या हुई। इस संबंध में मैने अखबारो में एक बयान दिया है जो इस प्रकार है

‘‘बस्तर में हुए नक्सली आक्रमण में पैतीस से अधिक नागरिक और सुरक्षा बल फिर मारे गये हैं। इस घटना पर अपनी प्रतिक्रिया देते हुए ज्ञान यज्ञ परिवार के संरक्षक बजरंग मुनि जी ने प्रेस विज्ञप्ति जारी करके कहा है कि उक्त आक्रमण मध्यप्रदेश छत्तीसगढ के पूर्व मुख्यमंत्री और कांग्रेस के वरिष्ठ पदाधिकारी दिग्विजय सिंह जी की सलाह पर भारत सरकार की नीति में आये परिवर्तन का परिणामहै। छिहत्तर जवानो की हत्या के बाद दिग्विजय सिंह जी ने बयान देकर जिस तरह भ्रम फैलाया वह कोई आकस्मिक घटना न होकर सोची समझी रणनीति का हिस्सा है ।

मुनि जी ने बताया कि नक्सलवाद के संबंध में दिग्विजय सिंह जी की दोहरी भूमिका बहुत पहले से रही है । एक पूर्व आई ए. एस तथा शान्ति दूत एक ओर तो नक्सलियों से भी निकट सम्पर्क में है तो दूसरी ओर दिग्विजय सिंह जी के भी खास सलाहकार । पुराने समय में उन्ही शान्ति दूत के कार्यकाल में बस्तर क्षेत्र शेष भारत से अलग थलग होना शुरू हुआ था तथा दिसम्बर पंचान्नवे में सरगुजा के रामानुजगंज क्षेत्र से भी नक्सलियों के प्रवेश का रास्ता साफ कराने में दिग्विजय सिंह जी के वही खास सलाहकार थे। यदि भारत नेपाल बनता भी है तो दिग्विजय सिंह जी के लिये तो विशेष चिन्ता की बात नहीं किन्तु सोनिया जी मनमोहन जी को तो गंभीरता पूर्वक निर्णय करना चाहिये। सोनिया जी ने तथामनमोहन जी ने दिग्विजय सिंह जी की सलाह पर जो मत संषोधन किया उसके पूर्व दिग्विजय सिंह जी की बीस वर्षो की छत्तीसगढ संबंधी नक्सली नीतियों की जांच करानी आवश्यक थी। जिस क्षेत्र को नक्सलवादी अपना मुक्त क्षेत्र घोषित कर रहे हों उस मुक्त क्षेत्र में सरकार को विकास की सलाह देना स्वयं स्पष्ट करता है कि सलाहकार की इच्छा क्या है। मुनि जी ने यह भी कहा कि यदि सोनिया मनमोहन जोडी को यह समझाया गया हो कि केन्द्र को ही जब समस्या सुलझानी है तो केन्द्रीय शासन अन्तर्गत सुलझाने सेकांग्रेस को लाभ होगा तो ऐसी हालत में रमनसिंह जी को चाहियें कि वे तत्काल पद छोडकर राष्ट्रपति शासन की सिफारिश कर दें जिससे राजनैतिक टकराव इस संकट काल में बाधक न बने। मुनि जी ने स्पष्ट किया कि नक्सलवाद न किसी तरह का आतंकवाद है न ही कोई समाजविरोधी कार्य। वह तो सीधा सीधा सत्ता संघर्ष है जिसका स्पष्ट उद्देश्य एक स्थापित संविधान को बन्दूक के बल पर हटाकर अपनी सत्ता स्थापित करना है। यह सीधा-सीधा युद्ध के समान है और उसे बस्तर क्षेत्र में उसी आधार पर मानने की आवश्यकता है। मुनि जी ने मांग की है कि दिग्विजय सिंह जी की नक्सलवाद संबंधी बीस वर्षो की गतिविधियों को ध्यान में रखकर जॉच भी कराई जानी चाहिये जिससे भविष्य के नीति निर्धारण में किसी तरह का कोई भ्रम पैदा न हो पावें’। मेरा एक सीधा सा प्रश्न इन शांति दूतों से है कि बस्तर के कुछ भाग पर नक्सलवादियों ने कुछ वर्षो से कब्जा करके उसे मुक्त क्षेत्र घोषित कर लिया है। भारत सरकार उक्त क्षेत्र को नक्सली , नियंत्रण से मुक्त कराने के लिये क्या करें? क्या अब हम उक्त नक्सल नियंत्रण क्षेत्र में विकास करें?आप इस कार्य में भारत सरकार को क्या सलाह देते हैं? मुझे इसका उत्तर चाहिये ?

प्रश्नोत्तर जून 2010

प्रश्न- नक्सलवाद के संबंध में आपके विचारों से भ्रम होता है। प्रसिद्ध समाजवादी सुरेन्द्र मोहन जी ने बताया है की ग्रामीण क्षेत्रों की बहुमूल्य खदानों को पूंजीपतियों के हवालेकरने के सरकारी षड़यंत्र के विरूद्ध ग्रामीण आंदोलन ही नक्सलवाद है । छत्तीसगढ़, झारखंड , उड़ीसा , बंगाल आदि में यही हो रहा है । ब्रम्हदेव जी शर्मा भी ग्राम सभा

सशक्तिकरण अभियान चला रहे हैं। उनका मानना है कि आदिवासी समूह को बेदखल करके उनकी जमीनें औद्योगिक धरानों को देने के विरूद्धआदिवासी आंदोलन का नाम है नक्सलवाद। सर्वोदय के लोग सरकार की योजनाओं को तो पूरी तरह घातक मानकर उसके विरूद्ध जन आंदोलन के समर्थक हैं साथ ही वे नक्सलवादियों को भी अहिंसा हेतु प्रेरित कर रहे हैं। आप इस योजना से असहमत क्यों हैं?

उत्तर -सुरेन्द्र मोहन जी सरकार की नीयत पर संदेह व्यक्त कर रहे हैं उससे मेरी पूरी सहमति है। ब्रम्हदेव जी शर्मा के ग्राम सभा सशक्तिगरण से भी मेरी सहमति है। नक्सलवादियों को दी जाने वाली सर्वोदयी सलाह से भी मैं सहमत हूँ । मेरा अनुभव यह है कि जो लोग कुछ करने की क्षमता नहीं रखते और सक्रिय दिखना चाहते हैं उनमें मैं शामिल नहीं। सरकार की नीयत खराब है और उसके विरूद्ध हम जन आंदोलन की क्षमता नहीं रखते इसलिये हम हिंसक आंदोलन का समर्थन करें, मैं इसके पक्ष में नहीं । मैं स्वयं को इतना सक्षम पाता हूँ कि सरकार की नीयत के विरूद्ध अहिंसक जन आंदोलन खड़ा करा सकूँ। यदि ऐसा आंदोलन खड़ा नहीं करा सका तो ग्राम सभा सशक्तिकरण के पक्ष में कार्य कर रहे हिंसक या अहिंसक आंदोलन का समर्थन भी कर सकता हूँ , किन्तु सरकार की नीयत के विरूद्ध हिंसक तानाशाही का समर्थन नहीं कर सकता। ऐसी स्थिति में मैं या तो तटस्थ रहूँगा या तानाशाही हिंसा का विरोध और सरकार का समर्थन करूंगा। मैं तानाशाही, लोकतंत्र और लोक स्वराज्य को अलग अलग मानता हूँ। मैं वर्तमान लोकतंत्र को लोक स्वराज्य से बहुत बुरा और तानाशाही से बहुत अच्छा मानता हूँ। पता नहीं सुरेन्द्र मोहन कैसे समाजवादी हैं जो लोहिया जी के जीवन को भी ठीक से नहीं समझते। लोहिया जी जीवन भर संघ परिवार की हिंसा के विरूद्ध रहे। सुरेन्द्र मोहन नहीं समझते क्योंकि सरकार की नीयत के विरूद्ध कुछ कर तो पाये नहीं। इसलिये सरकार के विरूद्ध बोलने लगे, भले ही उनका कथन हिंसक तानाशाही के ही पक्ष में क्यों न जा रहा हो। शर्मा जी बार बार आदिवासी आदिवासी चिल्लाते हैं। यह आंदोलन न तो स्व स्फूर्त आदिवासी आंदोलन है न ही बाहर के लोगों द्वारा प्रेरित। यह आंदोलन तो पूरी तरह बाहरी लोगों द्वारा नियंत्रित आंदोलन है जिसमें छत्तीसगढ़ ,झारखंड , उड़ीसा के कुछ लोग वेतन भोगी हैं । इसे जन आंदोलन कह कर प्रचारित करना ही भूल है। जन आंदोलन इस तरह नहीं होता जैसा हो रहा है । एक छोटा सा गिरोह पिस्तौल दिखाकर भीड़ से समर्थन प्राप्त करें तो वह सुरेन्द्र मोहन, ब्रम्हदेव शर्मा, आदि की नजर में जन आंदोलन हो सकता है, मेरी नजर में नहीं ।

मैं फिर से स्पष्ट कर दूँ कि हम लक्ष्य स्पष्ट करें और मार्ग पर सोचें । हमारा लक्ष्य है लोक स्वराज्य और मार्ग है ग्राम सभा सशक्तिकरण। इससे आगे सोचने करने का मेरे पास समय नहीं हैं । यदि तानाशाही को लक्ष्य और हिंसा को मार्ग बनाकर सुरेन्द्र मोहन भी नेतृत्व करेंगे तो मैं उनका पूरा पूरा विरोध करूँगा ।

नक्सलवाद समर्थक गांधीवादी नहीं

बजरंग मुनि

नक्सलवाद पर पूरे देश में बहस छिड़ी हुई है । झारग्राम रेल आक्रमण के बाद तो पूरे देश में घृणा का वातावरण बन गया है। रायपुर से दंतेवाडा तक की शान्ति के नाम पर यात्रा निकालने वाले पेशेवर मानवाधिकार कार्यकर्ता भी चुप बैठे हैं। नक्सलवादियों के प्रमुख शुभ चिन्तक दिग्विजय सिंह भी टी.वी. पर नही दिख रहें। राहुल गांधी भी दुबारा सोचन को मजबूर है। किन्तु अज्ञान वश बार बार एक खबर प्रकाशित होती है कि मानवाधिकार वादियो के साथ गांधीवादी कार्यकर्ता भी नक्सलवाद का समर्थन कर रहे हैं। यह आरोप पूरी तरह गलत है। कोई भी गांधीवादी नक्सलवादी गतिविधियों का किसी भी रूप मे समर्थन नही करता। गांधीवादी और सर्वोदयी अलग अलग होते है दुर्भाग्य से दोनो को एक मान लिया जाता है जबकि दोनो बिल्कुल अलग अलग है। गाँधीवादी नीतियों से लोकस्वराज्य का समर्थक होता है तथा चरित्र से त्याग प्रधान। गांधीवादी अहिंसक होता है किन्तु कायर नहीं। गांधीवादी हमेशा सत्ता के विकेन्द्रीयकरण का पक्षधर होता है। वह हिंसा का विरोधी होता है चाहे हिंसा साम्यवादी हो या इस्लामिक अथवा संघ परिवार प्रायोजित। कोई भी गांधीवादी कभी शासकीय सम्पत्ति प्राप्त करने की तिकडम नही करता। इनका व्यक्तिगत जीवन भी बहुत पवित्र होता है। गांधी जी के नाम पर सर्वोदय संस्थाओ से जुडे कुछ लोंगों के लिये यह आवश्यक नहीं। ये एन .जी ओ चलाकर करोडों रूपया विदेशी धन ले भी सकते है और विदेशी संस्थाओ को गाली भी दे सकते हैं। ये समाज को त्याग का उपदेश भी दे सकते है और स्वयं सस्था की सम्पत्तियों पर अनधिकृत कब्जा भी बनाये रख सकते है। ये अतिवादी अहिंसा का नाम लेकर अतिवादी हिंसा का समर्थन भी कर सकते हैं। ये ब्रम्हचर्य के उपदेश के साथ साथ विवाहित होते हुए भी दूसरी महिला को घर में रख सकते हैं। ये दूसरों को केश मुकदमों से दूर रहने की सलाह देते है और अपनी संस्था के मुकदमें अपने अन्दर न निपटाकर न्यायालय से निपटाते हैं। गांधीवाद इनकी ढ़ाल है, खादी इनका आवरण हैं। वास्तव में इनका गाँधीवाद से कोई सम्बन्ध नहीं। गुरूशरण जी सिद्धराज जी ढ़ढ़ा गांधीवादी थे। ठाकुरदास बंग जी गांधीवादी है। गांधीवाद की जीती जागती मिसाल मेरठ में खन्ना जी को देखिये। महावीर जी त्यागी, महावीर सिंह जी, ओम प्रकाश दुबे, शरद साधक जी है जो कभी नक्सलवाद के समर्थक नहीं। यदि कोई सर्वोदयी दुहरा आचरण करता हे तो उसके लिये गांधीवादी शब्द का प्रयोग ठीक नहीं। आज तरूण विजय जी ने गांधीवादी शब्द

लिखकर भ्रम पैदा किया है मै निवेदन करता हूॅ कि वे भविष्य मे गांधीवादी शब्द की जगह सर्वोदयी शब्द का ही प्रयोग करें। एक साफ अन्तर समझियेकि गांधीवादी लोकस्वराज्य के लिये निरंतर अहिंसक संघर्ष को प्राथमिकता देता है। अन्य सभी दूसरे कार्य उसके लिये उसके बाद हैं। सर्वोदयी लोक स्वराज्य संघर्षको सबसे अन्त मे रखता है। उसके उपर वह संघ परिवार विरोध , खादी की दुकानदारी, पपूंजीवाद विरोध ,स्वदेषी जागरण ,अमेरिका विरोध विदेशी कम्पनी विरोध , नशा मुक्ति अभियान आदि को रखता है। इतनी सीधी पहचान है कि आप आपसी से अन्तर समझ सकते है। इसलिये अन्तर समझने की आवश्यकता है सभी गांधीवादी तो सर्वोदयी होते है क्योकि स्वतंत्रता के बाद गांधीवादियो की पहचान सर्वोदयी के रूप मे ही होने लगी है किन्तु सभी सर्वोदयी गांधीवादी नही होते क्योकि उनमे से बहुत ऐसी प्रतिष्ठा से लाभ उठाने के लिये भी इन शब्द के साथ चिपके हुए हैं।

नक्सलवाद और शांतिवार्ता

बजरंग मुनि

यह सर्व विदित हे कि जब भी आतंकवाद पर संकट आना शुरू होता है तब आतंकवादियों का सुरक्षित टैंक सरकारी मेहमान बनकर शांति की बात शुरू कर देता है। नक्सलियों को केन्द्रीय गृह मंत्री चिदम्बरम् के प्रयत्नों में ज्योंही इमानदारी स्पष्ट हुई त्योंही उनके सुरक्षित टैंक अग्निवेष, मेधा पाटकर, ब्रम्हदेव शर्मा शांति वार्ता की दौड़ में सक्रिय हो गये। चूँकि कांग्रेस पार्टी ने समय समय पर इन छुटे शांति दूतों को अपने राजनैतिक हितों के लिये कई बार उपयोग किया है इसलिये कांग्रेस पार्टी इन्हें फटकारने की भी स्थिति में नहीं है। ये कांग्रेस पार्टी के ऐसे पालतू पहलवान है कि यदि ये आंख दिखा दें तो पाटी इन्हें आंख नहीं दिखा सकती। भले ही उसे आंख चुराना ही क्यों न पड़ें। जब अग्निवेष जी के आवेदन के बाद भी कोई आमंत्रण नहीं मिला तो ये स्वयं चलकर गृहमंत्री चिदम्बरम् के समक्ष फरियाद लेकर गये थे जिसमें चिदम्बरम् जी ने लगभग झिड़कते हुए इनसे कहा था कि आप पहले नक्सलवादियों को शांति का पाठ पढ़ाइयें तब हमसे बात करिये। बस इतनी सी पूंछ पकड़कर अग्निवेष शांति दूत बन बैठे। आज स्थिति यह है कि शांति वार्ता के लिये नक्सली नेता कोटेश्वर राव ने चार नाम उजागर किये हैं इनमें दो सरकार की ओर से हैं 1. ममता बनर्जी 2. स्वामी अग्निवेष तथा दो नक्सलवादियों की ओर से हैं
1. मेघा पाटकर 2. अरून्धतीराय। मैंने दोनों पक्षों की सूचियों की समीक्षा की तो पाया कि इस सूची में एक नाम छूट गया है और वह है कांग्रेस महासचिव दिग्विजय सिंह का। यदि यह नाम और शामिल हो जाता तो वास्तव में शांति स्थापित हो जाती। क्योंकि ये पांच मिलकर भारत को इस तरह शांत कर देते कि भारत नेपाल सरीखे शांति की गोद में बैठ जाता। अब समय आ गया है कि आस्तीन के सांप पहचाने जाय। कोई गांधी का नाम लेकर हमसे शांति की चिकनी चुपड़ी बातें कर रहा है तो कोई स्वामी दयानन्द का नाम लेकर। अरून्घती राय और मेघा पाटकर को तो समाज ने खूब पहचान रखा है। अब अग्निवेष, ममता बनर्जी , दिग्विजयसिंह, ब्रम्हदेव शर्मा को भी पहचानने की आवश्यकता है। नक्सलवादियों के ये सुरक्षित टैंक यदि मांद से बाहर निकाले गये हैं तो स्पष्ट है कि नक्सलवादी अपने उपर कोई बड़ा खतरा महसूस कर रहे हैं। सोनिया मनमोहन चिदम्बरम् जी को सावधान रहना चाहिये।

विनायक सेन प्रकरण, एक नई दिशा

नक्सलवादियों की कई शाखाएं होती हैं जिसकी पहली शाखा होती है विचार प्रसार शाखा और अंतिम शाखा है गोलीमार शाखा। बीच में और भी कई प्रकार की शाखाएं होती हैं। प्रचार शाखा के लोग समाज में घूम घूम कर नाटकों, गीतों, कविताओं, लेखों या भाषणों के माध्यम से अपने विचारों का प्रचार मात्र करते हैं। ये कभी नक्सलवादियों के साथ स्पष्ट नहीं होते। दूसरी शाखा के लोग विचार प्रसार शाखा की सहायता भी करते है और समय समय पर गोलीमार शाखा की गुप्त सहायता भी करते हैं। ये बीच वाले लोग भी कभी स्पष्ट नहीं होते। अरून्धती राय नक्सलवादियों की पहली शाखा की सदस्य रही हैं जो विचार अभिव्यक्ति से आगे नहीं जाती। और विनायक सेन नक्सलवादियों की दूसरी शाखा के सदस्य रहे हैं जो गुप्त रूप से उनकी सहायता भी करते रहे हैं। मैं अरून्धती राय के विचारों के विरूद्ध होते हुए भी उन पर कानूनी कार्यवाही का पक्षधर कभी नहीं रहा जब तक वह विचार अभिव्यक्ति से आगे बढ़कर किसी क्रिया में न उतरे। विनायक सेन मानवाधिकार संस्थाओं के नाम पर ढके छुपे गोलीमार शाखा की सहायता करते रहते थे यह जग जाहिर है। पी.यू.सी.एल. के अनेक कार्यकर्ता ऐसी ओट के सहारे नक्सलवाद का समर्थन करते रहते हैं यह भी किसी से छुपा नहीं किन्तु ऐसा कोई सदस्य गोलीमार शाखा की सहायता करता है यह भेद अब खुला। नक्सलवाद का समर्थन और नक्सलवादी की सहायता बिल्कुल भिन्न विषय हैं। समर्थन में अभिव्यक्ति मात्र है क्रिया नहीं। सहायता में अभिव्यक्ति मात्र न होकर क्रिया भी जुड़ी हुई है जो निश्चित रूप से अपराध है। इस तरह विनायक सेन ने भूल की जो अपनी सीमाओं का अतिक्रमण किया। विनायक सेन का कार्य किसी भी रूप में किसी मरीज का इलाज न होकर नक्सलवादी की सहायता थी। जेल में वह अकेला बीमार नही था जिसके इलाज की मानवीय तड़प विनायक सेन में थी। मुझे ऐसा लगता है कि सरकारी मषीनरी ने सेन को कुछ विशेष छूट दी जिन्हें सेन समझ नहीं सके और सरकारी जाल में फंसते चले गये। जब पुख्ता सबूत लायक स्थिति बनी तब इन्हें पकड़ा गया। विचारणीय प्रश्न यह नहीं

है कि विनायक सेन को उपरी अदालत से छूट मिलेगी या नहीं क्योंकि ऐसी प्रक्रिया तो चलती ही रहती है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इस सजा से सम्पूर्ण अराजक खेमे में हड़कम्प मचा हुआ है। स्वतंत्रता के बाद ऐसा पहली बार हुआ है। अब तक तो ये लोग बेघड़क मदद करते रहते थे और कोई कुछ नहीं बोलता था। अनिल चमड़िया से लेकर अषोक बाजपेयी तक जो अपेक्षाकृत ढके छुपे माने जाते हैं वे भी अब मैदान में कूद पड़े हैं। ये लोग इस प्रकरण को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता कहकर भ्रम फैला रहे है जबकि विनायक सेन प्रकरण अभिव्यक्ति की सीमा तक न रहकर प्रत्यक्ष क्रिया का मामला हैं। विनायक की पत्नी एलिना को पारिवारिक कारणों से भी सहायता की पात्रता है और कहीं उसका भी नंबर न आ जावे इसकी भी चिन्ता है। एलिना तो अब भारत छोड़ने का भी मन बना रही हैं। सरकार को उन पर नजर रखनी चाहिये। किन्तु ये अनिल चमड़िया, अषोक बाजपेयी जैसे लोगों को एलिना जैसी चिन्ता नहीं। उन्हें चिन्ता है भारत के बदलते परिदृष्य की जहाँ अब अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और प्रत्यक्ष सहायता के बीच अन्तर होने लगा है। पी0यू0सी0एल0 के अन्य पदाधिकारियों को बेशर्म दलीलें देने की अपेक्षा शर्म से सिर झुका लेना चाहिये कि उनकी संस्था का नाम इस तरह बदनाम हुआ। और यदि वे इसे ठीक समझते हों तो वे भी वैसा ही करने का साहस करें जैसा विनायक ने किया। कानून उन्हें भी सबक सिखा देगा। अब वह जमाना गया जब वामपंथियों को समाजवाद और मानवाधिकार के नाम पर कुछ भी लिखने और करने की छूट थी। अब हिंसक क्रान्ति का सपना देखने वाले आंख खुलते ही स्वयं को जेल के अन्दर पायेंगे क्योंकि अब न्यायालय भी आलोचनाओं के भय से दूर होकर न्याय करने की हिम्मत दिखाने लगे हैं। अब साम्यवादी वामपंथ भी अतिवादी नक्सलवाद का खुला समर्थन करने से हिचकिचा रहा है। अब वैसे हालात नहीं जैसे पिछले साठ वर्षो में रहे हैं। विनायक सेन की सजा से यदि अतिवादियों के सफेद पोष समर्थकों में हड़कम्प मचा है तो यह एक शुभ संकेत ही है। क्योंकि नक्सलवाद का छिपकर समर्थन करने वालों को अब खुले मैदान आना पड़ रहा है। मुझे तो आश्चर्य है कि अब तक दिग्विजय सिंह जी स्वामी अग्निवेष ब्रम्हदेव शर्मा की मंडली किस बात की प्रतीक्षा कर रही है अन्यथा उन्हें तो विनायक सेन के समर्थन में तुरंत ही आ जाना चाहिये था। उच्च न्यायालयों से विनायक सेन छूट भी जावें तो भी वातावरण में परिवर्तन तो दिख ही रहा है। हमें प्रतीक्षा करनी चाहिये कि अब भारत में आतंकवाद अवश्य ही ठिकाने लग सकेगा। किन्तु इन सबके साथ ही हमें यह भी समीक्षा करनी चाहिये कि इस प्रकार के प्रकरण क्या आजन्म कारावास की सजा योग्य हैं या इनकी सजा सात आठ वर्ष ही पर्याप्त है। प्रत्यक्ष अपराध, करना अपराध में सहायक होना और अपराधी की सहायता करना ये तीनों तीन अलग अलग विषय हैं। इस आधार पर कानून की समीक्षा भी करनी चाहिये। विनायक सेन प्रकरण में सजा यदि कम होती तो इतना भावनात्मक उबाल पैदा करने में हिंसक तत्वों को सफलता नहीं मिलती। पूरा देश कहीं न कहीं यह महसूस करता है कि सजा ज्यादा है। मैं भी महसूस करता हूँ। हिंसक तत्व इसका लाभ उठा रहे हैं। अतः हमें चाहिये कि विनायक सेन जैसे हिंसा के पक्षधर अपराधियों का पूरा पूरा विरोध करते हुए भी ऐसे मामलों की ठीक से समीक्षा करें। भारत भावना प्रधान देश है। यहाँ किसी भी मामलें में अति होते ही भावनाएँ भड़कती हैं। ऐसे अवसर का लाभ उठाकर समाज विरोधी तत्व पूरी दिशा बदलने की ही कोशिश में लग जाते हैं। विनायक सेन प्रकरण में भी यही हुआ। अतिवादी दण्ड का लाभ उठाने में समाज विरोधी तत्व सक्रिय हुए और वातावरण को गलतदिशा देने लगे। हम सबका कर्तव्य है कि हम सच को सच के रूप में समाज तक लाने का प्रयत्न करें।

भारत में नक्सलवाद

बजरंग मुनि अप्रैल2017

मैं गढ़वा रोड़ में स्टेशन पर टिकट के लिये लाइन में खड़ा था। मेरी लाइन आगे नहीं बढ़ रही थी और कुछ दबंग लोग आगे जाकर टिकट ले लेते थे, तो कुछ पैसे देकर भी ले आते थे। मेरे लड़के ने भी मेरी सहमति से धक्का देकर आगे बढने की कोशिश की और टिकट ले आया। धक्का देने मे एक बुढ़िया गिर गई, उसने उठाया भी नहीं और मेरी आपत्ति पर उसने कहा कि लोकतंत्र में तो कमजोर ही धक्का खाता है और खड़ा रह जाता है। जबकि धक्का देने वाला हमेशा आगे बढता रहता है। मैं वर्षो तक विचार करता रहा, सोचता रहा कि धक्का खाकर खड़े रह जाना उचित है या धक्का देकर आगे जाना। वर्षो बाद मैंने अपने झारखंड के एक मित्र से दुविधा बताई तो उसने कहा कि दोनो ही मार्ग गलत है। मैं तो धक्का देने वाले को पटक दूंगा और जरूरत पडी तो गोली भी मार दूंगा। मेरा वही मित्र बाद में नक्सलवादियों का नेता बना। उसने हमारे शहर के आस पास कुछ लोगो को गोलियां भी मारी और खुद भी मारा गया। आज भी हमारे पूरे क्षेत्र में वही तीनों स्थितियां विद्यमान है जैसी पहले थी। यदि ठीक से सर्वे किया जाये तो देश की सम्पूर्ण आबादी में तीनो ही प्रकार के लोग मिलते है। तीनों के अपने-अपने तर्क हैं और तर्क भी आकाट्य हैं। उन्हीं तीनों में कुछ लोगों को शरीफ कहते है तो कुछ लोगों को चालाक और कुछ को उग्रवादी। आम तौर पर ऐसे उग्रवादी संगठित हो जाया करते है। भारत मे ऐसे तीन संगठन हैं जो उग्रवादी विचारों के आधार पर कार्य करते रहते हैं। उग्रवादियों में से ही कुछ लोग अतिवादी हो जाते है जो आतंकवादी कहे जाते है। संघ विचारो से ओत प्रोत आतंकवादी अभिनव भारत के नाम से आगे बढे तो इस्लाम की विचार धारा से प्रेरित आतंकवादीप्रत्यक्ष दुनियां

भर मे दिख रहे है और साम्यवादी विचार धारा से प्रेरित आतंकवादियों को नक्सलवादी कहा जाता है। सभी उग्रवादी संगठन प्रारंभ में आतंकवादियों का अप्रत्यक्ष समर्थन करते है। दूसरी ओर जब आतंकवादी मजबूत होते है तो सबसे पहले उसी संगठन को निशाना बनाते है जिसके सहारे वे आगे बढे है। नक्सलवादियों ने भी बंगाल में साम्यवादियों को निशाना बनाने में कोई कसर नहीं छोडी थी। यहां तक कि उन्होंने ममता बनर्जी तक का साथ दिया था। मुझे देश भर के नक्सलवादियों से तो प्रत्यक्ष जानकारी नहीं है किन्तु मेरा अनुभव बताता है कि छत्तीसगढ में नक्सलवाद के प्रोत्साहन में दिग्विजय सिंह जी का अप्रत्यक्ष प्रयास रहा है। बाद में जब गृहमंत्री चितम्बरम ने ईमानदारी से नक्सलवाद को समाप्त करने की योजना बनाई तब भी दिग्विजय सिंह जी ने ही राहुल गांधी की शराफत का लाभ उठाकरनक्सलवादियों को बचाने की भूमिका अदा की थी। गांधी वादी भी ऐसे ही सीधे साधे होते है और वे भी ऐसे नक्सलवादियो को बचाने में हमेशा ढाल का काम करते है। उग्रवाद और आतंकवाद से निपटने के तरीके अलग-अलग होते है। उग्रवाद से कानून निपट सकता है किन्तु आतंकवाद से कानून की जगह राज्य को निपटना पड़ता है। नक्सलवाद की सुरक्षा में अनेक लोग या संगठन कानून का सहारा लेकर राज्य का विरोध करते देखे जाते है। वामपंथी और जे एन यू संस्कृति से प्रभावित न्यायपालिका के लोग भी यही भूल करते रहे है। अनेक बडे-बडे लेखक औरसाहित्यकार भी ऐसा करते देखे गये है। ऐसे लोग नक्सलवाद के लिये एक सुरक्षा कवच का काम करते है और साथ में यह भी कहकर अपनी पीठ थपथपाते है कि उन्होंने कानून और मानवाधिकार की रक्षा की है जबकि नक्सलवादियों द्वारा किये जा रहे अपराधो या अमानवीय कार्यो की रोकथाम के समय ऐसे न्यायाधीषों या अन्य लोगो की कोई भूमिका नहीं होती। नक्सलवादियों से मेरी चर्चा रही है। वे सभी समस्याओं का कारण राजनैतिक, सामाजिक ,आर्थिक व्यवस्था को तथा समाधान अपनी सरकार को बताते रहे है। उनके पास वैकल्पिक व्यवस्था का कोई स्वरुप नहीं था। उनके पास इस बात का कोई उत्तर नहीं था कि यदि उनकी सरकार गलत करेगी तो उसे हटाने का समाज के पास क्या तरीका होगा। हमारी संविधान मंथन सभा मे भी ऐसे कुछ लोग आते रहे है किन्तु उनके पास कोई ऐसा प्रारूप नहीं था कि वे कैसा संविधानप्रस्तुत करेंगे। उनका ये ही उत्तर था कि जब समय आयेगा तब देखा जायेगा। जब सरगुजा जिले में नक्सलवाद आया और हमलोगों ने उन्हें सलाह दी कि वे गोली बंदूक छोडकर ग्राम सभाओ को स्वतंत्रता पूर्वक अपना कार्य करने दे तो उन्होंने अस्वीकार कर दिया। इस तरह यह स्पष्ट हो गया कि नक्सलवाद किसी भी रूप में व्यवस्था परिवर्तन नहीं है। बल्कि पूरी तरह सत्ता संघर्ष है। हमलोगो ने उनसे दूरी बना ली और सरकार का साथ दिया। परिणाम हुआ कि नक्सलवाद हमारे जिले से शून्य हो गया। पूरे भारत में हमारा जिला अकेला ऐसा है जहां नक्सलवाद बहुत तेजी से आया, छाया भी और उसी तेजी से हार थक कर समाप्त भी हो गया। दूसरी ओर हम छत्तीसगढ के उस दक्षिणी छोर को भी देख रहे है जहां नक्सलवादियों ने एक छोटे भूभाग पर अपनी स्वतंत्र सरकार बना रखी है और भारत सरकार निरंतर उसे मुक्त कराने का प्रयास कर रही है। देश भर में यह प्रचारित किया जाता है कि नक्सलवादियों को स्थानीय लोगो का जन समर्थन प्राप्त है। यह बात पूरी तरह गलत है। हमारे जिले में भी जब नक्सलवादी उस स्थिति में थे तो उनसे भयभीत लोग उनका समर्थन करते थे और आज जब सरकार का शासन है तो उनकी प्रशंसा करने वाला एक भी व्यक्ति पुरे जिले में नहीं मिलेगा। नक्सलवादियों के हितैषी इस तरह का दुष्प्रचार करते ही रहते है। नक्सलवाद साम्यवाद का अतिवादी स्वरुप है। इसका अर्थ है कि साम्यवाद के सारे दुर्गुण नक्सलवाद में भी मौजूद रहते है। गुण तो कोई न साम्यवाद में दिखता है न ही नक्सलवाद में । वर्ग विद्वेष को आधार बनाकर असंतोष का विस्तार इन सबका एक मात्र मार्ग होता है। धीरे धीरे ये लोग अपने व्यक्तिगत जीवन में भी असंतुष्ट हो जाते है। जो लोग भय या स्वार्थ के कारण नक्सलवादी नहीं होते। ऐसे लोग अपने बाद के जीवन में असंतोष को महसूस करते है। नक्सलवाद के जन्म दाता कानू सान्याल वृद्धावस्था में आत्महत्या करके मरे । क्योंकि वे नक्सलवाद के सत्ता संघर्ष के मार्ग के विरूद्ध थे । दो चार दिन पहले ही प्रसिद्ध कवि गदर के भी हृदय परिवर्तन की खबरे आ रही है। यदि हम नक्सलवाद के भविष्य की बात करें तो पिछली सरकारो के समय पूरे प्रशासन में बडी संख्या में लोग नक्सलवादियों की ढ़ाल के रूप में काम करते थे। मानवाधिकार संगठन या अन्य कई प्रकार के लोग भिन्न-भिन्न बोर्ड लगाकर भिन्न-भिन्न तरीको से नक्सलवाद का समर्थन करते दिखते रहते थे। अब वातावरण बदल गया है। जे एन यू उस विचार धारा का प्रमुख केन्द्र था। वह स्वयं अपने अस्तित्व की लडाई लड रहा है। साम्यवाद भी देश भर में समाप्ति की ओर है। न्यायपालिका की भी सोच में बदलाव आ रहा है। साहित्य और पत्रकारिता के लोग भी पुरस्कार वापसी के असफल प्रयास के बाद चुप हैं। अग्निवेष जी भी स्थितियां भाप रहे है। दिग्विजय सिंह जी का प्रभाव अपने आप घट रहा है। ब्रहमदेव शर्मा तो चले गये और सर्वोदय भी अब दो गुटों में बंटकरकमजोर हो गया है। राज्य सभा में धीरे-धीरे वर्तमान सरकार मजबूत होती जा रही है और ऐसा लगता है कि नक्सलवाद का सम्पूर्ण समापन बहुत दूर नहीं है। अर्थात एक दो वर्षो की ही बात है। यदि कल्लूरी बस्तर में रह गये होते तो यह काम बहुत जल्दी निपट गया होता किन्तु उनके जाने के बाद भी कोई बहुत ज्यादा अंतर नहीं आएगा। क्योकि अब सरकार में आतंकवाद और नक्सलवाद का अप्रत्यक्ष समर्थन करने वाले कोई नहीं है। एक बार बस्तर मुक्त होते ही पूरे देश में नक्सलवाद की कमर टूट जायेगी। और इस तरह मैं आश्वस्त हूँ कि नक्सलवाद देश के लोगो के लिये कोई गंभीर चिंता का विषय नहीं है। देशकी वर्तमान सरकार उसे समाप्त कर ही लेगी। नक्सलवाद का जीवित रहना कश्मीर समस्या के अपेक्षा भी अधिक बडा कलंक था। किन्तु अब उस कलंक से हमें मुक्ति मिल जायेगी। ऐसा निश्चित दिखता है।